प्रथम अंक

जनवरी 2018

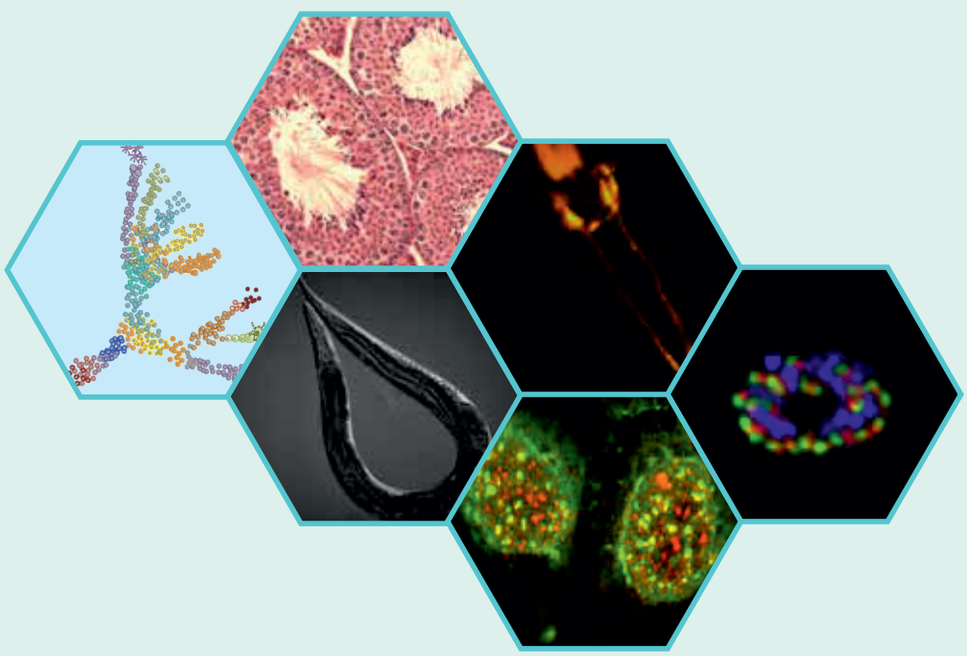

जैवप्रतिरक्षा दर्पण

राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान

प्रोफेसर सुधांशु व्रती, तत्कालीन निदेशक, राप्रसं एवं श्री चन्द्र प्रकाश गोयल, संयुक्त सचिव, जैवप्रौद्योगिकी विभाग राजभाषा संबंधी निरीक्षण के पश्चात् संसदीय राजभाषा समिति के अध्यक्ष माननीय डॉ. सत्यनारायण जटिया जी से राजभाषा नियम पुस्तिका प्राप्त करते हुए।

रा.प्र.सं. का राजभाषा संबंधी निरीक्षण के दौरान संस्थान के वरिष्ठ अधिकारियों से चर्चा करते हुए संसदीय राजभाषा समीति के सदस्यगण।

जैवप्रतिरक्षा दर्पण
प्रथम अंक

हिंदी पत्रिका
जनवरी 2018

चीफ पैटर्न : डॉ. अमूल्य कुमार पंडा, निदेशक
मुख्य संपादकः डॉ. अखिल चन्द्र बनर्जी–
एमेरिटस वैज्ञानिक
संपादकः श्री रनबीर सिंह
सहायक निदेशक (रा.भा.)

संपादकीय सलाहाकार मंडल
डॉ. परमेश्वरी सहाय, स्टाफ वैज्ञानिक
सुश्री अंजू सरकार, प्रशासन अधिकारी
सुश्री प्राची सचिन देशपांडे, प्रलेखन अधिकारी
सुश्री निशा, कनिष्ठ अनुवादक

सम्पादकीय कार्यालय
राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान,
अरूणा आसफ अली मार्ग, नई दिल्ली–110067
दूरभाषः 011–26162125

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख / कहानी आदि लेखकों के अपने व्यक्तिगत विचार हैं। संस्थान का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है।
– मुख्य संपादक

विषय सूची

पृष्ठ सं.

1. सम्पादकीय 05
2. राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान–30 वर्षों की सफल यात्रा 06
3. जैव प्रतिरक्षाविज्ञान – एक परिदृश्य 08
4. जैव प्रतिरक्षाविज्ञान गीत 14
5. एच आई वी, एड्स एवं रोकथाम के उपाय 15
6. सुविचार संग्रह 16
7. विज्ञान संदेश 17
8. देश के सतत विकास और प्रगति के लिए स्टार्टअप एक महत्त्वपूर्ण पहल 19
9. क्या सभी को शिक्षित करने से ही एक सभ्य समाज की कल्पना संभव है ? 20
10. लक्ष्य 24
11. पी.एच.डी. एक अनोखी यात्रा 25
12. पारिस्थितिकी (इकोसिस्टम) तंत्र एवं मानव जीवन 26
13. अद्यतन सूचनाओं एवं ज्ञान का स्रोत ''पुस्तकालय'' 28
14. हिंदी की सवैधानिक स्थिति 30
15. खुशी का रासायनिक आधार 33
16. विटामिन बी–12 की कमी और अस्थि स्वास्थ्य 35
17. क्षय रोगः निदान एवं चुनौतियां 38
18. भारत के सात महान वैज्ञानिक जो है पूरी दुनिया में मशहूर 40

राजभाषा नीति - संक्षावलोकन
तेलुगु
नेपाली
पंजाबी
बंगला
तमिल
डोगरी
मराठी
गुजराती
मणिपुरी
कोंकणी
मलयालम
कश्मीरी
मैथिली
कन्नड़
संथाली
उड़िया
संस्कृत
असमिया
सिन्धी
हिन्दी (राजभाषा)
संस्कृत

सम्पादकीय

जैव प्रतिरक्षा दर्पण का प्रथम अंक पाठकों की सेवा में प्रस्तुत करते हुए मुझें अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है। राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान में लम्बे समय से इस विषय पर चर्चा चल रही थी कि संस्थान हिंदी में एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ करें। राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान में कार्यरत 80% वैज्ञानिक एवं कर्मचारियों, एवं हिन्दी में प्रवीण पाए गये हैं। इस कारण प्रथम अंक के शीघ्र प्रकाशन को प्रेरणा मिली और बल प्राप्त हुआ। भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग के निरन्तर सुझावों और वर्तमान में संस्थान के कार्यकारी निदेशक डॉ. अमूल्य कुमार पँडा के प्रयासों और निर्देशन में इस कार्य हेतु एक समिति का गठन किया गया और प्रथम अंक के प्रकाशन हेतु कई दौर में विचार–विमर्श हुआ। परिणाम स्वरूप प्रथम अंक आप सब की सेवा में प्रस्तुत है।

जैव प्रतिरक्षाविज्ञान यद्यपि प्रत्येक मनुष्य के जीवन और स्वास्थ्य से जुड़ा हुआ अत्यन्त आवश्यक ज्ञान है जिसकी जानकारी होने से समाज का प्रत्येक व्यक्ति लाभान्वित हो सकता है, परन्तु यह विज्ञान काफी हद तक केवल वैज्ञानिक समाज तक ही सीमित रह गया। केवल टीकों के रूप में ही कुछ ज्ञान जनसाधारण तक पहुँचता है। इस पत्रिका के प्रकाशन का एक मुख्य उददेश्य जैव प्रतिरक्षाविज्ञान को सरलतम शब्दों में जनमानस तक पहुँचाना है। प्रथम अंक इस प्रयास की ओर पहला कदम है। इस अंक में ''जैव प्रतिरक्षाविज्ञान–एक परिदृश्य'' शीर्षक वाला लेख जैव प्रतिरक्षा विज्ञान की मूल अवधारणाओं, रोगाणुओं और विषाणुओं का हमारे जीवन और स्वास्थ्य से क्या सम्बन्ध है, हमारा शरीर किन उपादानों से अपनी रक्षा करता है, को अत्यन्त सरलता से परन्तु सुरुचिपूर्ण तरीके से रेखाँकित करता है। एड्स और एच.आई. वी. से सम्बन्धित लेख अत्यन्त सुग्राह्य तरीके से इस भयानक रोग से जनसाधारण को परिचित कराता है। राजभाषा हिंदी की सवैधानिक स्थिति क्या है, कितना इसका सरकारी काम–काज में महत्व है, यह समझने का प्रयास भी किया गया है। सभी लेख एवम् कविताएँ मौलिक हैं और अत्यन्त रोचक हैं। हमारा यह प्रयास रहा है कि हम संस्थान में उपस्थित सभी प्रतिभाओं को इस प्रथम अंक के प्रकाशन में योगदान के लिये प्रोत्साहित करें। हमारी अपेक्षा के विपरीत काफी बड़ी संख्या में योगदान प्राप्त हुआ और हमारे लिये यह निर्णय लेना थोड़ा कठिन हो गया कि इस अंक में प्रकाशन हेतु क्या चयनित करें।

इसका कारण यह था कि सभी योगदान एक से बढ़ कर एक थे। पृष्ठों की संख्या, प्रकाशन की अधीरता, प्रकाशन हेतु उपलब्ध सीमित धनराशि जैसे कई सीमाकारी कारकों के कारण इस अंक में सभी योगदानों को स्थान देना सम्भव नहीं था। अतः हमने यह निर्णय लिया कि इन सभी योगदानों को आगामी अंकों में स्थान दिया जायेगा।

इस प्रथम अंक के प्रकाशन में शीघ्रता के बावजूद हमें इस बात का सदैव स्मरण रहा कि विषय–वस्तु का चयन उचित हों, भाषायी और तथ्यगत त्रुटियाँ कम से कम हों और पत्रिका हमारी मौलिक अवधारणा – जन मानस को जैव प्रतिरक्षाविज्ञान के प्रति जागरूक करना – के अनुरूप हो। हमने यद्यपि अपनी तरफ से इन सभी विषयों का भरपूर ध्यान रखा है फिर भी अज्ञानवश एवं प्रमादवश कुछ त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। पाठकों से अनुरोध है कि वे हमें अपना सुझाव अवश्य भेजें ताकि भविष्य के अंको में उन त्रुटियों की पुनरावृत्ति न हो। हमें आशा है कि आप को यह प्रथम अंक रोचक एवम् ज्ञानवर्धक लगेगा और आशा है कि आप हमें बहुमूल्य योगदान देते रहेंगे।

धन्यवाद।

अखिल चंद्र बैनर्जी
एमेरिटस वैज्ञानिक

राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान-30 वर्षों की सफल यात्रा

डॉ. अमूल्य कुमार पंडा
निदेशक

ऐतिहासिक इमारत कुतुब मीनार के शानदार दृश्य के बीच हरियाली के साथ चट्टानी इलाके से घिरे 21 एकड़ के इस क्षेत्र में राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान (रा.प्र.सं.) की परिकल्पना, 1970 के दशक में मौलिक और एप्लाइड प्रतिरक्षाविज्ञान' में अनुसंधान कार्य करने हेतु एक राष्ट्रीय स्तर के संस्थान अनुप्रयुक्त के रूप में की गई थी। विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी)' की विज्ञान एवं इंजीनियरिंग शाखा (एसईआरसी)' द्वारा प्रतिरक्षाविज्ञान क्षेत्र की पहचान की गई। एसईआरसी की बैठकों, सेमीनारों में मानव और पशुओं के स्वास्थ्य पर प्रतिरक्षाविज्ञान अनुसंधान के क्षेत्र में हुई प्रगति की भरपूर संभावनाओं का उल्लेख किया गया और इसके परिणामस्वरूप ''राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान (रा.प्र.सं.)'' की स्थापना के लिए 'भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् (आईसीएमआर)', भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् (आईसीएआर)' और विभिन्न उद्योगों और एजेंसियों के विशेषज्ञों के साथ परामर्श शुरू किया गया। 'आईसीएमआर–डब्ल्यूएचओ के अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केंद्र' के तत्वाधान में राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान को अनुसंधान केन्द्र के रूप में विकसित करने की कल्पना साकार हुई। यह केन्द्र कई वर्षों तक अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स)' में काम करता रहा। रा.प्र.सं. को सोसायटी पंजीकरण अधिनियम (1860 के XXI) के तहत 24 जून, 1981 को एक स्वायत्त सोसायटी के रूप में पंजीकृत किया गया और इसकी पहली गवर्निंग बॉडी (शासी निकाय) की बैठक 27 जुलाई, 1991 को प्रोफ़ेसर एम.जी.के. मेनन की अध्यक्षता में हुई। प्रोफ़ेसर जी.पी तलवार को 14 अगस्त, 1981 को मानद निदेशक के रूप में पदस्थापित किया गया था। 31 मार्च, 1982 को 'आईसीएमआर–डब्ल्यूएचओ अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केंद्र' का विलय औपचारिक रूप से 'राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान' (रा.प्र.सं.) के साथ कर दिया गया और राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान ने स्वतंत्र रूप में अपना कामकाज शुरू कर दिया। इस तरह राष्ट्रीय प्ररितक्षाविज्ञान संस्थान का उद्भव हुआ। प्रोफ़ेसर जी.पी तलवार को 2 नवम्बर, 1983 रा.प्र.सं. के प्रथम निदेशक के रूप में नियुक्त किया गया। राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान के वर्तमान भवन का निर्माण 27 अक्टूबर, 1983 को

शुरू हुआ। प्रयोगशालाओं, पशु घरों, आवासीय अपार्टमेंट्स, अनुसंधान स्कॉलर्स होम, सभागृह, कैंटीन, और एक स्वीमिंग पूल के निर्माण के वक्त कैम्पस के वास्तु की डिज़ाइन की अवधारणा को इस तरह किया गया कि इस चट्टानी इलाके की प्राकृतिक निशानियाँ संरक्षित रह सकें।

तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्री राजीव गांधी द्वारा संस्थान को औपचारिक रूप से 6 अक्टूबर, 1986 को राष्ट्र को समर्पित कर दिया गया। 1990 तक राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान (रा.प्र.सं.) एक बेहतर और सक्रिय अनुसंधान संस्थान में बदल गया। विभिन्न शोध समूहों, डॉक्टरेट छात्रों, पोस्ट डॉक्टरेट साथियों और अत्याधुनिक बुनियादी सुविधाएँ होने के कारण यह देश का एक प्रमुख अनुसंधान संस्थान बन गया। इस अवधि में संस्थान ने अति उत्तम अनुसंधान सुविधाओं के साथ कार्यात्मक प्रयोगशाला परिसर के विकास को ही नहीं देखा बल्कि समकालीन जीवविज्ञान और जैव प्रौदयोगिकी के कई क्षेत्रों में विस्तृत अनुसंधान संबंधी गतिविधियों का आनंद भी उठाया।

पिछले तीन दशकों में राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान (रा.प्र.सं.) ने प्रतिरक्षाविज्ञान, संक्रामक बीमारियों, प्रजनन संबंधी जीव विज्ञान और संरचनात्मक और रासायनिक जीव–विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान और विकास को चरम शिखर पर पहुंचाया है। संस्थान के वैज्ञानिकों के अनेक उच्च स्तरीय प्रकाशनों से यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान (रा.प्र.सं.) ने हमेशा ही अपने उद्यमशील प्रयासों से यथार्थवादी खोज के साथ नए प्रयोगों की संभावनाओं को विकसित कर आधारभूत एवम् मौलिक अनुसंधान के क्षेत्र में उत्कृष्टता लाने का भरसक प्रयास किया है। राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान (रा.प्र.सं.) के तत्कालीन निदेशकों प्रोफेसर जी.पी. तलवार, डॉ. एस.के. बसु, प्रोफेसर अवधेश सुरोलिया और डॉ. चंद्रिमा शाहा के नेतृत्व में संस्थान ने कई गौरवशाली परंपराओं को कायम किया है और हम इन्हें जारी रखने और अच्छे वैज्ञानिक समूह बनाए रखने की उम्मीद करते हैं।

मानव जीवन को स्वस्थ, सुरक्षित एंव दीर्घायु बनाने के लिए निरंतर शोधरत रहना राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान का ध्येय है। संस्थान, चुनौती बन कर उभर रही नित नई बीमारियों के निदान एवं उपचार के लिए तकनीक विकसित करने एवं उपचार के लिए दवाईयों की खोज में कार्यरत है। पिछले तीन दशकों में, राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान ने आधुनिक जीवविज्ञान के क्षेत्र में स्वयं को एक प्रमुख अनुसंधान केंद्र के रूप में स्थापित किया है। संस्थान बुनियादी एंव अप्लाइड प्रतिरक्षा के लिए उच्च क्षमता के अनुसंधान कार्य करने के लिए प्रतिबद्ध है ताकि प्रतिरक्षा प्रणाली के लिए रणनीतिक संसाधन तैयार कर रोगों की रोकथाम तथा संरक्षण सुलभ कराया जा सके। रा.प्र.सं. अपने शोधकर्ताओं के विश्वसनीय अनुसंधान के बल पर अपनी संस्थागत भविष्य को विस्तारित करने और समाज में मानव स्वास्थ्य की ओर रोग के क्षेत्र में जटिल समस्याओं का समाधान करने के लिए आगे बढ़ रहा है। हमारे प्रयासों का एक और अभिन्न हिस्सा, हमारी निरंतर विज्ञान शिक्षा और आउटरीच कार्यक्रम रहा है।

राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान स्वास्थ्य के क्षेत्र में अपने जनादेश की प्राप्ति की दिशा में विज्ञान में उत्कृष्टता प्राप्त करने हेतु अपने अनुंसधान पाठ्यक्रमों को जारी रखे हुए है। हमारे वैज्ञानिक एवं शोधकर्ता निःस्वार्थ भाव से अपने कर्तव्य पालन के लिए कृत संकल्प हैं। अनुसंधान एवं शोध के साथ–साथ संस्थान अपने अन्य संवैधानिक दायित्वों के अनुपालन में कभी पीछे नहीं रहें। संस्थान ने देश की राजभाषा नीति को भी अपने प्रशासनिक काम–काज में सदभावनापूर्वक अपनाया है। संस्थान में राजभाषा हिंदी का प्रचार– प्रसार योजनाबद्ध तरीके से प्रेरणा एवं प्रोत्साहन के साथ किया जा रहा। संस्थान के वरिष्ठ वैज्ञानिकों एंव कर्मचारियों द्वारा अपने काम–काज में हिंदी का प्रयोग स्वेच्छा से किया जाना भविष्य में राजभाषा हिंदी की प्रगति एंव विकास की ओर इंगित करता है।

इस पत्रिका के प्रकाशन का उद्देश्य संस्थान द्वारा मानव स्वास्थ के लिए की जा रही नित नई खोज, शोध, उपचार, एवं निदान से जन समुदाय को परिचित कराना है और युवा वैज्ञानिकों को इन विधाओं में कार्य करने की ओर आकर्षित करना। पत्रिका को हिंदी में प्रकाशित करने का मकसद संस्थान की उपलब्धियों को आम जनता तक पहुंचना है, क्योंकि देश के 80 प्रतिशत लोग हिंदी पढ़ते–लिखते और समझते हैं । यदि हम अपने प्रयासों और उपलब्धियों को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचा कर उन्हें लाभान्वित कर सकते हैं तभी हमारा उद्देश्य और प्रयास वास्तव में सार्थक होगें, ऐसा मेरा मानना है।

पत्रिका में विज्ञान एवं सामाजिक ज्ञान–विज्ञान से संबंधित पहलुओं और अपने क्षेत्र में प्रतिष्ठित रहे वैज्ञानिकों, अधिकारियों, कर्मचारियों तथा शोधकर्ताओं द्वारा लिखे गएं लेखों को शामिल कर ज्ञानवर्धक एवं रोचक बनाने का एक प्रयास किया गया है । मैं, पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए संपादकीय मंडल के सदस्यों को बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि अगला अंक शीघ्र ही प्रकाशित होगा और अधिक ज्ञानवर्धक एवं रोचक होगा। इस पत्रिका को और अधिक आकर्षक एवं ज्ञानवर्धक बनाने के लिए पाठकों के सुझावों का स्वागत है ।

जैव प्रतिरक्षाविज्ञान - एक परिदृश्य

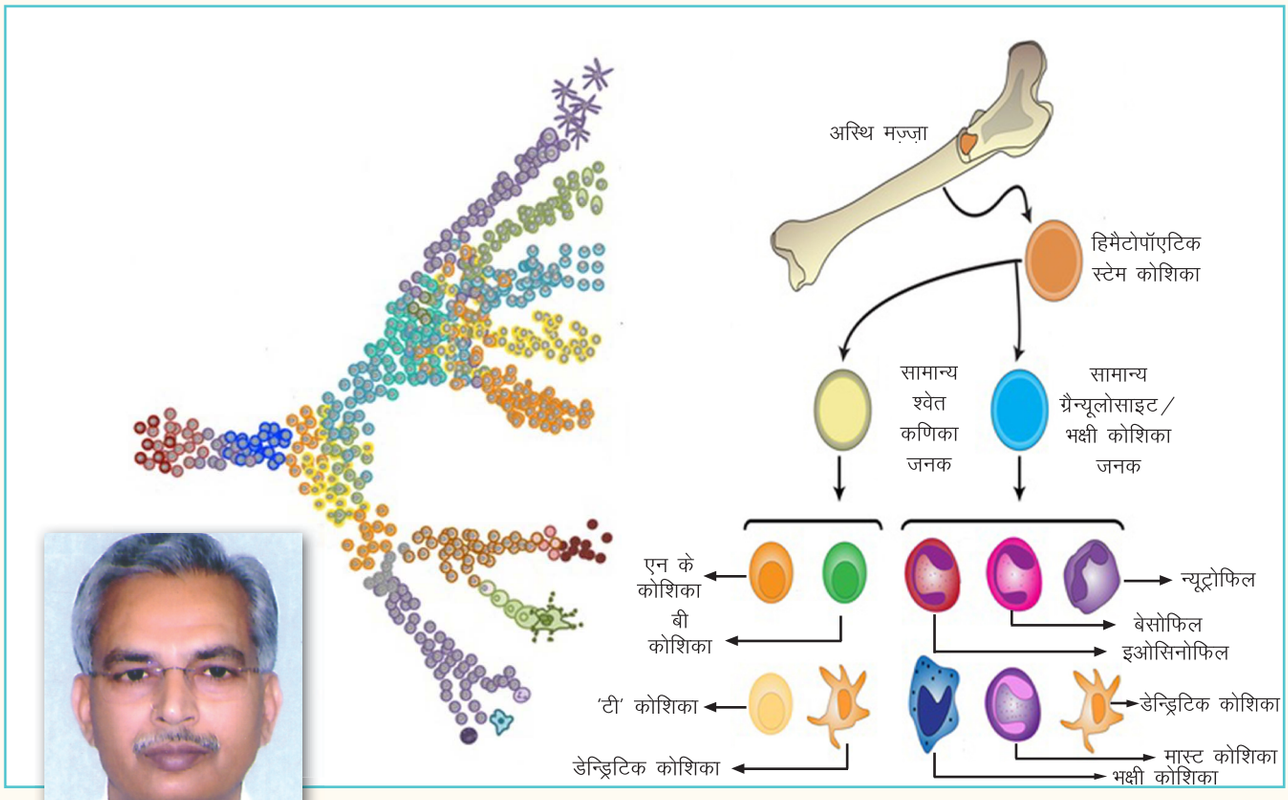

डॉ. परमेश्वरी सहाय
स्टॉफ वैज्ञानिक, रा.प्र.सं.

मानव शरीर एक अत्यंत जटिल जैवकि संरचना है। मानव शरीर का निर्माण अंगों से होता है। अंग विभिन्न प्रकार के ऊतकों (टिश्यू) से निर्मित होता है। विभिन्न प्रकार की कोशिकाएँ (सेल्स) ऊतकों का निर्माण करती हैं। प्रत्येक कोशिका विविध प्रकार के कोशिकाँगों से बनती हैं। कोशिकाँगों के निर्माण में अत्यन्त जटिल एवम् विविध प्रकार के गुरुअणुओं का समावेश रहता है। गुरुअणुओं का निर्माण अणुओं से, अणुओं का निर्माण परमाणुओं से और परमाणुओं का निर्माण इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन और न्यूट्रॉन जैसे अत्यन्त सूक्ष्म कणों से होता है। अस्तु एक जीव शरीर इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, और न्यूट्रॉन का एक बहुत बड़ा ढेर होता है। गुरुअणुओं के स्तर तक कोई जीवन नहीं होता परन्तु उन्ही गुरुअणुओं से बने कोशिका में जीवन के सभी लक्षण – वृद्धि, विभाजन, जैव रासायनिक कियाएं, मृत्यु– विद्यमान होते हैं। आज तक यह स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं कि निर्जीव गुरुअणुओं से बने कोशिका में जीवन किस प्रकार उत्पन्न हो जाता है। फिर भी मनुष्यों द्वारा अर्जित ज्ञान द्वारा निर्जीव गुरुअणुओं और जीवित कोशिकाओं के बीच की कड़ी का पता चल चुका है। इस कड़ी का नाम है ''विषाणु'' (वायरस)। विषाणु जीव शरीर के बाहर निर्जीव होता है परन्तु जीव शरीर में प्रवेश करते ही वह एक जीवित संरचना की तरह व्यवहार करता है। मानव शरीर में उपस्थित कोशिकाओं, ऊतकों, अंगों में एक अतिविशिष्ट समन्व्य जीवन को बनाए रखता है। इसी समन्वय का एक स्तर तक बने रहना स्वास्थ्य है। इस समन्वय में किसी भी कारण से उत्पन्न व्यवधान शरीर को एक अन्य स्तर पर ले जाता है जिसे हम रोग या व्याधि कहते हैं, और शरीर को अस्वस्थ !!!

हम सभी मनुष्य अपने जीवन काल में कभी न कभी अस्वस्थ होते हैं। विभिन्न प्रकार के रोग हमारे शरीर को अस्वस्थ करते हैं जैसे उपापचयी रोग (मेटाबॉलिक डिज़ीज), आनुवंशिक रोग (हेरेडिटरी डिज़ीज), न्यूनता रोग (डेफिशिएंसी डिज़ीज़), संक्रमण रोग (इन्फेक्शियस डिज़ीज़) आदि। हमारा शरीर अपने चारों तरफ उपस्थित वातावरण और पारिस्थितिक तंत्र (इकोसिस्टम) से सदैव प्रभावित होता है और वातावरण में और परिस्थितिक तंत्र में

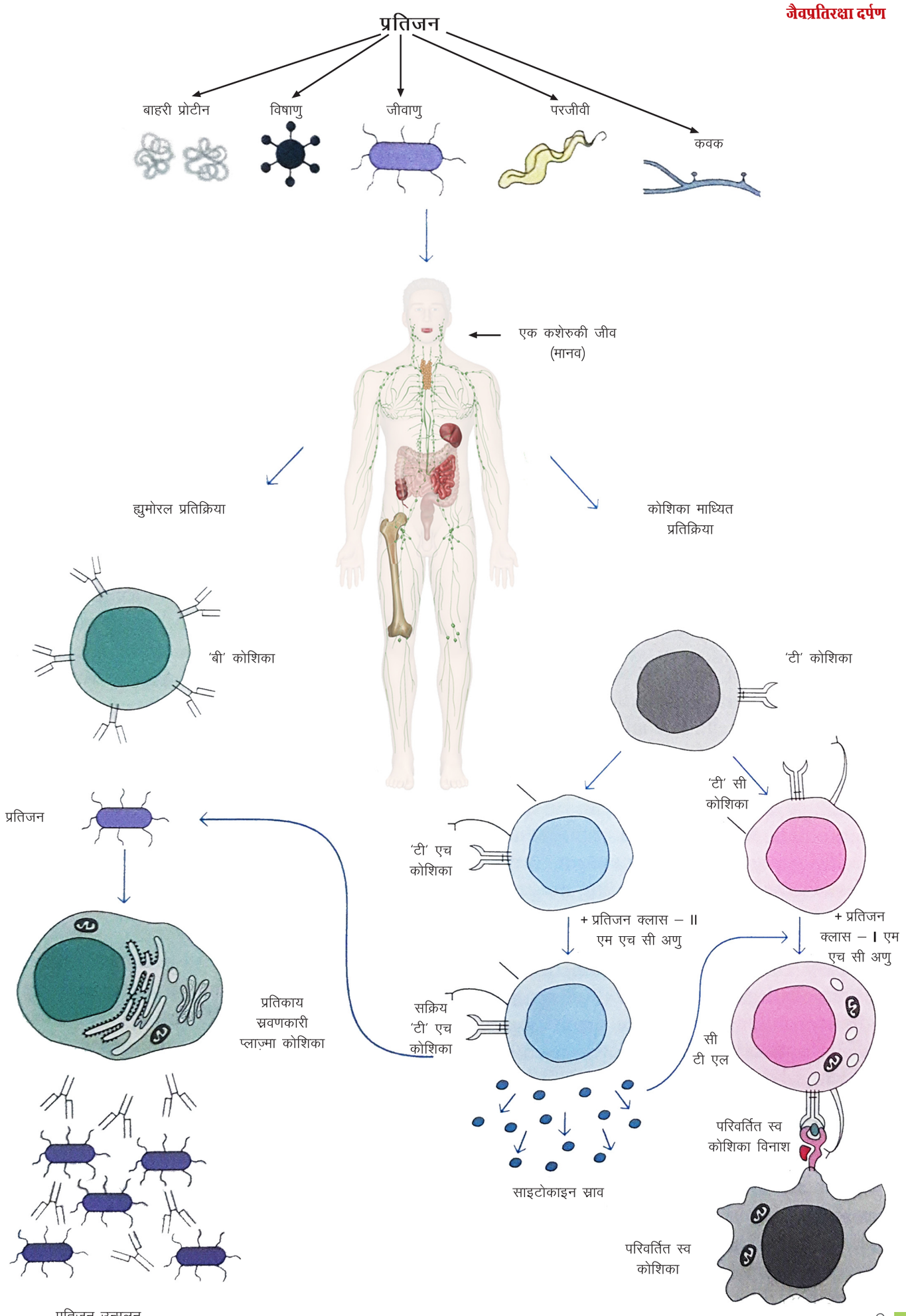
प्रतिजन
बाहरी प्रोटीन
विषाणु
जीवाणु
परजीवी
कवक
एक कशेरुकी जीव
(मानव)
ह्युमोरल प्रतिक्रिया
कोशिका माध्यित
प्रतिक्रिया
'बी' कोशिका
'टी' कोशिका
प्रतिजन
'टी' एच
कोशिका
'टी' सी
कोशिका
+ प्रतिजन क्लास – II
एम एच सी अणु
+ प्रतिजन
क्लास – I एम
एच सी अणु
प्रतिकाय
स्रवणकारी
प्लाज़्मा कोशिका
सक्रिय
'टी' एच
कोशिका
सी
टी एल
परिवर्तित स्व
कोशिका विनाश
साइटोकाइन स्राव
परिवर्तित स्व
कोशिका
प्रतिजन उन्मूलन

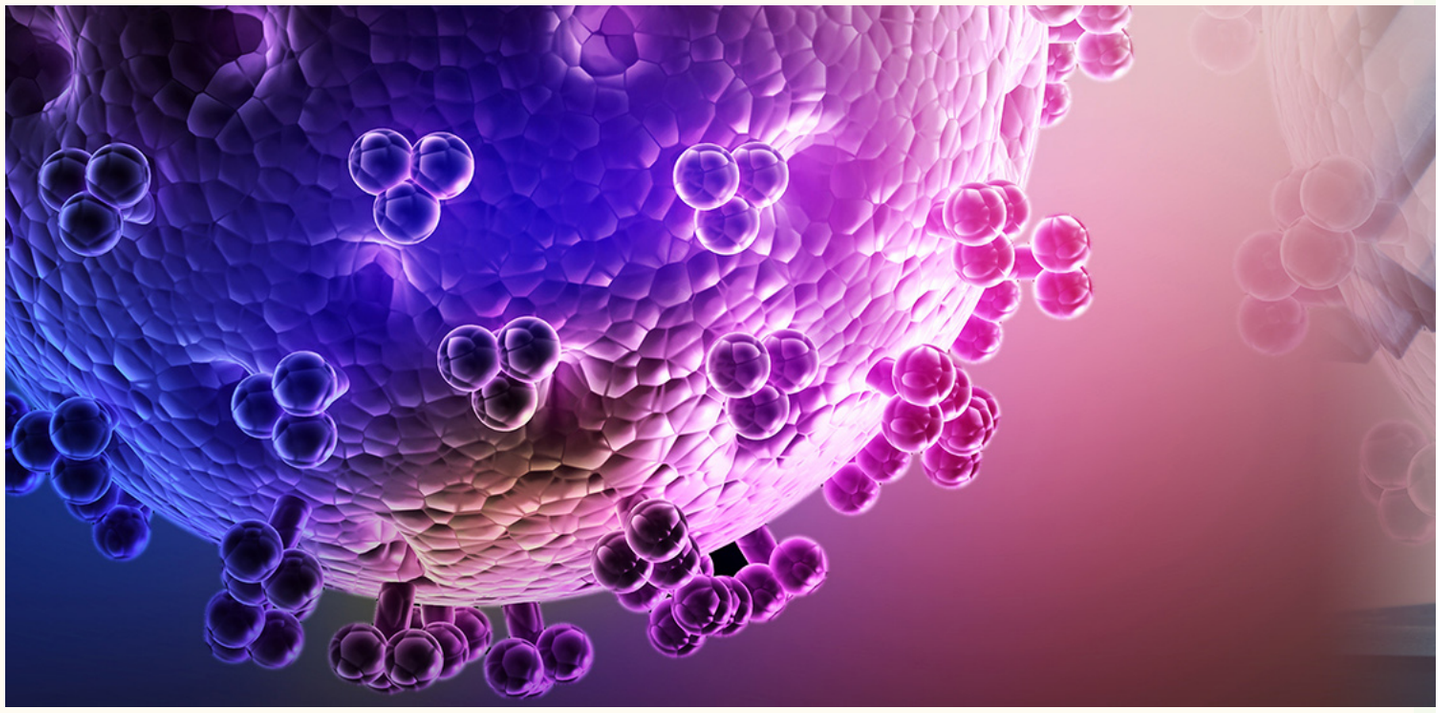

उपस्थित विभिन्न प्रकार के प्रदूषक, विषाणु, जीवाणु (बैक्टीरिया) रोगाणु (पैथोजेन), कृमि (वर्म्स) आदि हमारे शरीर पर लगातार आक्रमण करते है और हमें किसी न किसी प्रकार से संक्रमित करते है। प्रश्न यह है कि हमारा शरीर इन संक्रमणकारी तत्वों से अपना बचाव कैसे करता है। इस विषय का ज्ञान हमारे लिये अत्यन्त आवश्यक है। इसी विषय के वैज्ञानिक ज्ञान का नाम है ''जैव प्रतिरक्षाविज्ञान''।

जैव प्रतिरक्षाविज्ञान में हम अपने शरीर के उन विभिन्न गुरुअणुओं कोशिकाओं, ऊतकों और अंगों का विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करते हैं जो हमें विषाणुओं, जीवाणुओं, रोगाणुओं आदि से उत्पन्न होने वाले संक्रमण, रोगों और उनसे बचने (प्रतिरक्षा) के बारे में बताता हैं। हमारे शरीर में प्राकृतिक रूप से ऐसे सभी गुण विद्यमान हैं जो हमें इन कारकों से लड़ने में सक्षम बनाता है। जैव प्रतिरक्षाविज्ञान का उद्भव उस अवलोकन से है जब ईसामसीह के जन्म से लगभग 430 वर्ष पूर्व एथेंस में प्लेग जैसी महामारी में जो जीवित बच गये थे उन्हें ही अन्य रोगियों के सेवा–सूश्रुसा में लगाया जाता था क्योंकि वे अज्ञात कारणों से प्लेग से दुबारा बीमार नहीं पड़ते थे। बाद में ऐसे अनेक अवलोकन हुए जिनमें यह पाया गया कि कुछ लोग जो कुछ संक्रमण के बाद स्वतः स्वस्थ हो गये हैं वे उसी संक्रमण के दुबारा होने पर रक्षित हैं और दुबारा बीमार नहीं पड़ते। अर्थात् जीव शरीर में रोगाणुओं से लड़ने की नैसर्गिक क्षमता होती है। जैव प्रतिरक्षाविज्ञान को अंग्रेजी भाषा में इम्यूनोलॉजी (Imunology) कहा जाता है जिसका निर्माण लैटिन भाषा के शब्द इम्यूनिस (Immunis) से हुआ है और जिसका अर्थ है रक्षण या बचाव।

आइये अब हम यह जाने कि विविध प्रकार के विषाणुओं, जीवाणुओं, रोगाणुओं आदि से लड़ने और स्वयं का बचाव करने की यह अद्भुत नैसर्गिक क्षमता मानव शरीर में कैसे और कहाँ से आती है। एथेंस के उस अवलोकन के करीब–करीब 2000 वर्षो तक उसे एक वैज्ञानिक रूप में नहीं जाना जा सका। पंद्रहवी शताब्दी में कुछ चीनी और तुर्क छोटी चेचक से बचाव के लिये रोगियों के शरीर पर चेचक के घाव पर पड़ी खुरंट (क्रस्ट) को या तो सूँघ लेते थे अथवा उसे स्वस्थ लोगों के शरीर में छोटा घाव बना कर उसमें डाल देते थे और छोटी चेचक (स्मॉल पॉक्स) से बच जाते थे। सन् 1798 में एक अंग्रेज डॉक्टर एडवर्ड जेन्नर ने छोटी चेचक से बचने के लिये गायों में होने वाले चेचक (काऊ पॉक्स) के फफोलों से द्रव निकाल कर उसे लोगों में डाला और यह दिखाया कि वे लोग छोटी चेचक से ग्रसित होने से बच गये। इस अवलोकन और विधि के विकास के साथ जैव प्रतिरक्षा की वैज्ञानिक नींव पड़ी और इसी कारण से एडवर्ड जेन्नर को जैव प्रतिरक्षाविज्ञान का जनक कहा जाता है। जेन्नर के इस अवलोकन से यह बात स्पष्ट हो गई की रोगाणुओं को विशेष विधि से और सीमित मात्रा में स्वस्थ लोगों में डालने से उन्हें उस रोगाणु से रक्षित किया जा सकता है। बाद में अनेक वैज्ञानिक अनुसंधानों से यह स्पष्ट हुआ कि मानव शरीर में एक अदभुत नैसर्गिक गुण है। अपने इसी अद्भुत गुण के कारण मानव शरीर अपने गुरुअणुओं, कोशिकाओं और ऊतकों को बाहरी विषाणुओं, जीवाणुओं, रोगाणुओं और अन्य जीवों के गुरुअणुओं से विभेदित कर लेता हैं। परिणामस्वरूप मानव शरीर ऐसे किसी भी बाहरी तत्व को जैसे ही पहचान लेता है उसके प्रति वह

विभिन्न स्तरों पर अपनी प्रतिक्रिया देता है और अपना बचाव करता है। इस बचाव में अपनी प्रतिक्रिया देते समय मानव शरीर गुरुअणुओं और कोशिकाओं दोनो का प्रयोग करता है। गुरुअणुओं द्वारा प्रतिरक्षण को आण्विक प्रतिरक्षण (ह्यूमोरल इम्यूनिटी) और कोशिकाओं द्वारा प्रतिरक्षण को कोशिकीय प्रतिरक्षण (सेल्यूलर इम्यूनिटी) की संज्ञा दी जाती है। यद्यपि दोनों की एक–दूसरे में भूमिका होती है फिर भी आण्विक प्रतिरक्षण में गुरुअणुओं की प्रधानता होती है और कोशिकीय प्रतिरक्षण में कोशिकाओं की प्रधानता होती है।

उपरोक्त सामान्य वर्णन से आगे आइए एक कदम इस रोचक विषय के विज्ञान की ओर बढ़ाएँ। कार्यकीय दृष्टि से जीव शरीर रोगकारकों से अपने बचाव के लिए जो प्रतिक्रिया देता है उसके दो स्पष्ट भाग हैं – पहचान और प्रतिक्रिया। विषाणुओं, सूक्ष्मजीवाणुओं, रोगाणुओं, और अन्य जीवों के शरीर के गुरुअणुओं, कोशिकाओं और ऊतको को हमारे शरीर के संदर्भ में प्रतिजन (एंटीजेन अथवा इम्युनोजेन) कहते हैं। इन प्रतिजनों को शरीर में प्रवेश करने से रोकने और निष्क्रिय करने के लिये शरीर की प्रतिक्रिया को इम्यून रेसपास इस कहते हैं। प्रतिरक्षा में हमारे शरीर के बहुत से गुरुअणुओं, कोशिकाओं, और अन्य अंगों की भूमिका होती है जो सम्मिलित रूप से हमारा प्रतिरक्षी तंत्र (इम्यून सिस्टम) बनाते हैं।

प्रतिजनों के हमारे शरीर पर आक्रमण होने पर हमारा शरीर दो स्तरों पर अपना बचाव करता है और अपनी प्रतिक्रिया देता है – पहला स्तर सहज, जन्मजात या गैरविशिष्ट होता है, जिसे वैज्ञानिक भाषा में इन्नेट इम्यूनिटी कहते हैं और दूसरा स्तर विशिष्ट, उपर्जित, अथवा अर्जित होता है और उसे विज्ञान में एक्वायर्ड इम्युनिटी कहते है। आगे के वर्णन में हम सरलता के लिये इन्हें क्रमशः सहज और अर्जित रूप में ही प्रयोग करेंगे। सहज प्रतिरक्षा को चार प्रकार के रक्षात्मक अवरोधों से बना मानते है। इन चारों अवरोधों के नाम हैं – (1) शरीर संरचना अवरोध (एनॉटॉमिकल बैरियर), (2) कार्यकीय अवरोध (फिजियालॉजिकल बैरियर), (3) भक्षण कोशिकीय और अन्तर्कोशिकीय अवरोध (फैगोसिटिक और एण्डोसिटिक बैरियर)। (4) शोथ कारकीय अवरोध (इनफ्लमेटरी बेरियर)। शरीर संरचना अवरोध में मुख्य रूप से स्वस्थ और क्षतिरहित त्वचा और विभिन्न अंगों जैसे आँखों, नाकों, गले, श्वासनलियों, मूत्रोजनन अंगों आदि पर चढ़ी हुई श्लेषमिका (म्युकोशल) नाम की परत की भूमिका होती है। किसी भी प्रतिजन के आक्रमण का प्रथम स्थान शरीर संरचना अवरोध होते हैं। यदि ये अवरोध स्वस्थ और क्षतिरहित हों तो प्रतिजन शरीर में प्रवेश नहीं कर पाते और हम रोगग्रस्त होने से बच जाते हैं। हमारा इसलिये प्रयास होना चाहिये कि हम अपने इस बहुमूल्य और महत्वपूर्ण अवरोध को सदैव स्वस्थ और सबल बना कर रखें। यदि किसी कारण से प्रथम स्तर का शरीर संरचना अवरोध विफल हो जाता है तो प्रतिजनों का दूसरे स्तर के कार्यकीय अवरोध का सामना करना पड़ता है। कार्यकीय अवरोध में शरीर का तापमान, निम्न स्तर की अम्लीयता, और अन्य जैव रासायनिक कारक जैसे लाइसोजाइम (लार में उपस्थित एक एन्जाइम), इन्टरफेरॉन गामा (एक जैव रसायन), काम्प्लीमेंट सिस्टम (रक्त में उपस्थित विशिष्ट प्रोटीनों का एक तंत्र), आदि अपनी भूमिका निभाते हैं। मानव शरीर के आमाशय में उपस्थित हाइड्रोक्लोरिक अम्ल की अम्लीयता भोजन के साथ आए अधिकाशं जीवाणुओं को नष्ट कर देती है। लार में उपस्थित लाइसोज़ाइम जीवाणुओं की कोशिका भित्ति (सेलवाल) को तोड़–फोड़ कर उन्हें नष्ट कर देता है। शरीर का उच्च तापमान (ज्वर, बुखार) कई रोगाणुओं की संख्या वृद्धि पर रोक लगाता है। रक्त में उपस्थित कॉम्पलीमेंट्स या तो जीवाणुओं को स्वयं नष्ट कर देते है या जीवाणुओं पर एक पर्त बना कर उन्हें हमारे शरीर में उपस्थित भक्षी कोशिकाओं का ग्रास बना देते हैं। द्वितीय स्तर के इन अवरोधों को किसी प्रकार पार कर जाने पर इन रोगजनक जीवाणुओं का सामना भक्षी कोशिकाओं (रक्त कणिकाएँ जैसे मोनोसाइट, न्यूट्रोफिल, मैक्रोफाज़ेज आदि) से होता है जो इन जीवाणुओं का विभिन्न विधियों से भक्षण कर उन्हें नष्ट कर देती हैं। प्रतिजन भी अन्तःकोशिकीय विधि द्वारा कोशिका के भीतर प्रवेश करते ही नष्ट कर दिये जाते हैं। इसी प्रकार चौथे स्तर पर शरीर शोथकारी प्रक्रमों (इन्फ्लामेटरी प्रॉसेसेस) से जीवाणुओं से अपनी रक्षा करता है। ऊतकों के क्षतिग्रस्त होने पर जो जीवाणु वहाँ पहुँच जाते है वे शोथ (इन्फ्लामेंशन) को जन्म देते हैं। शोथ के चार लक्षण होते हैं – लाली, जलन, सूजन और दर्द । इन

लक्षणों के उत्पन्न होने पर कुछ अन्य परिवर्तन भी होते हैं। शिराओं (रक्त वापस हृदय की ओर ले जाने वाली रक्त वाहिनियाँ) का सिकुड़ना, शिराकाओं में सें रक्त का द्रव और कुछ कोशिकाओं का बाहर निकलना, और निकली हुई भक्षी कोशिकाओं द्वारा जीवाणुओं का संहार। इस कारण अधिक द्रव, भक्षी कोशिकाओं और जीवाणुओं के मृत शरीरों और अन्य जैवरासायनिक पदार्थो के जमावड़े से क्षतिग्रस्त ऊतक में एक पीले रंग का गाढ़ा द्रव बन जाता है जिसे हम पीव या मवाद कहते हैं। इसका अर्थ यह है कि यदि शरीर के किसी भाग में मवाद बन रहा है तो वहां पर किसी न किसी प्रकार का संक्रमण है और हमारा शरीर अपना प्रतिरक्षी प्रत्युत्तर (इम्यून रेस्पाँस) दे रहा है। अतः उपरोक्त चारों स्तरों पर शरीर जीवाणुओं, रोगाणुओं और प्रतिजनों से सहज रूप से अपना बचाव करता है। यदि शरीर स्वस्थ है और हमारा प्रतिरक्षी तंत्र मज़बूत है तो हम अधिकाँश रोगजनकों से अपना सहज विधि से बचाव कर पाते हैं। स्वस्थ शरीर और मज़बूत प्रतिरक्षी विधि से बचाव कर पाते हैं। स्वस्थ शरीर और मज़बूत प्रतिरक्षी तंत्र के लिये हमें साफ–सफ़ाई रखनी चाहिए, स्वच्छ जल पीना और पौष्टिक भोजन करना चाहिए, सभी मौसमी फलों और सब्ज़ियों का प्रचुर मात्रा में उपयोग करना चाहिए, अपनी जीवन शैली नियमित और उत्तम प्रकार की रखनी चाहिए और सभी हानिकारक पदार्थों और दूषित पदार्थों के सेवन से बचना चाहिए। ऊपर हमने सहज या साधारण प्रतिरक्षा का सरल और संक्षिप्त विवरण दिया। यह सहज प्रतिरक्षा जीवाणुओं, रोगाणुओं, और प्रतिजनों में विभेद नहीं करती और सभी के लिए एक जैसा ही प्रत्युत्तर देती है। इसी कारण यह विशिष्ट नहीं होती। इसके उलट अर्जित प्रतिरक्षा अतिविशिष्ट होती है। अब हम इस अतिविशिष्ट अर्जित प्रतिरक्षा पर प्रकाश डालेंगे। यद्यपि कि यह अर्जित प्रतिरक्षा न केवल अतिविशिष्ट होती है बल्कि अति जटिल भी होती है फिर भी यहाँ यह प्रयास रहेगा कि इसे सरलतम सम्भव शब्दों में आप के समक्ष प्रस्तुत किया जाय।

अर्जित प्रतिरक्षा एक कार्यकारी प्रतिरक्षा तंत्र की हमारे शरीर में उपस्थिति का सूचक है जो जीवाणुओं, रोगाणुओं, और प्रतिजनों को न केवल विशिष्ट रूप से पहचानने में सक्षम होता है बल्कि उन्हे चयनित रूप से समाप्त करने में भी सक्षम होता है। सहज प्रतिरक्षा के विपरीत अर्जित प्रतिरक्षा काफी अनुकुलनीय होती है और निम्न चार विशिष्ट लक्षण दर्शाती है।

1. प्रतिजन विशिष्टता
2. विविधता
3. प्रतिरक्षी स्मृति
4. अपने–पराये की पहचान

प्रतिजन विशिष्टता के कारण अर्जित प्रतिरक्षा बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित प्रतिजनों के भीतर के अतिसूक्ष्म अन्तर को भी पहचान लेती है। इस पहचान या विभेदन के लिये यह प्रतिरक्षा तंत्र पहचान करने में सक्षम अणुओं/गुरुअणुओं की बहुत बड़ी संख्या में विविधता उत्पन्न करता है जो प्रतिजनों पर उपस्थित अरबों विशिष्ट सरंचनाओं को पहचाननें में सक्षम होती है। एक बार किसी प्रतिजन की विशिष्ट पहचान हो जाने के बाद और प्रतिरक्षी प्रत्युत्तर देने के बाद अर्जित प्रतिरक्षा एक प्रतिरक्षी स्मृति का निर्माण करती है। इस प्रतिरक्षी स्मृति के कारण उसी प्रतिजन के शरीर में दुबारा पहुंचने पर शरीर शीघ्र और पहले से ज्यादा शक्तिशाली प्रतिरक्षी प्रत्युत्तर देता है। अर्जित प्रतिरक्षा की इसी विशिष्टता को प्रतिरक्षी टीकों के निर्माण में उपयोग किया जाता है। अर्जित प्रतिरक्षा सामन्यतः केवल बाहरी प्रतिजनो के विरूद्ध प्रतिरक्षी प्रत्युत्तर देती है जिसका अर्थ है कि हमारा शरीर स्वयं और पराये के बीच अन्तर कर लेने में सक्षम होता है। कुछ अवस्थाओं में यही अर्जित प्रतिरक्षा स्वयं के कुछ अणुओं के प्रति भी प्रतिरक्षी प्रत्युत्तर देती है जिसके कारण घातक ओर जानलेवा प्रतिरक्षी रोग उत्पन्न होता है जिसे स्वप्रतिरक्षी रोग (ऑटोइम्यून डिज़ीज़) कहते हैं। उपरोक्त से अब यह स्पष्ट हो गया होगा कि अर्जित प्रतिरक्षा क्यों अतिविशिष्ट और अति जटिल है। यहाँ पर यह बताना भी प्रसंगित होगा कि अर्जित प्रतिरक्षा पूर्णतया स्वतंत्र रूप में नहीं कार्य करती अपितु यह सहज प्रतिरक्षा के उपर भी निर्भर करती है क्योंकि दोनो मे भक्षी कोशिकाएँ, कुछ गुरुअणु, एवम् अन्य कारक समान रूप से कार्य करते हैं। इससे सम्बद्ध यह भी जानता अनिवार्य है कि अर्जित प्रतिरक्षा के बहुत से घटक सहज प्रतिरक्षा में भी सहायक होते हैं। अस्तु दोनो प्रकार की प्रतिरक्षा की पारस्परिक निर्भरता होती है।

एक प्रभावी अर्जित प्रतिरक्षा उत्पन्न करने में दो विशिष्ट कोशिका समूहों की भागीदारी होती है – प्रतिजन प्रस्तुतकारी कोशिकाएँ (एण्टीजेन प्रेजेंटिंग सेल्स) और लसीका कोशिकाएँ (लिम्फोसाइट्स) प्रतिजन प्रस्तुतकारी कोशिकाएँ वाह्य प्रतिजनों को अपने भीतर ले कर प्रवर्धित करती हैं और उनके एक अतिविशिष्ट खण्ड को एम.एच.सी.–II नामक गुरुअणु पर बाँध कर उन्हें अपने कोशिकाकला की बाहरी सतह पर प्रस्तुत कर देती है। प्रतिजन के एक अतिविशिष्ट टुकड़े को अपनी सतह पर प्रस्तुत करने की क्षमता के कारण ही इन कोशिकाओं को प्रतिजन प्रस्तुतकारी कोशिकाएँ कहते हैं।

लसीका कोशिकाएँ एक खास तरह की श्वेत रक्त कणिकाएँ होती है जो अस्थिमज्जा में उत्पन्न होती हैं और शरीर में रक्त के साथ भ्रमण करने के बाद लसीका ग्रन्थियों में निवास करती हैं। लसीका कोशिकाएँ, जिनकी सतह पर प्रतिजन के प्रस्तुत टुकड़ों से बन्ध बनाने वाले ग्राही गुरुअणु उपस्थित होते हैं, ही अर्जित प्रतिरक्षा के उपरोक्त चार विशिष्ट लक्षणों के लिये उत्तरदायी होती हैं। लसीका कोशिकाएँ दो प्रकार की होती हैं– बी कोशिकाएँ और टी कोशिकाएँ। बी कोशिकाओं की सतह पर उपस्थित ग्राही गुरुअणुओं को प्रतिकाय (एण्टीबॉडीज़) कहते हैं। एक ऐसी बी

कोशिका जिसकी सतह पर प्रतिकाय उपस्थित हो परन्तु जिसने अभी प्रतिजन न देखा हो वह जैसे ही अपने प्रतिकाय के अनुरूप प्रतिजन को देखती है और उससे बन्ध बनाती है उसमें विभाजन शुरू हो जाता है और विभाजित कोशिकाएँ दो उप–समूहों में बंट जाती हैं – स्मृति बी कोशिकाएँ और प्लाज़्मा कोशिकाएं। प्लाज़्मा कोशिकाएँ अपने भीतर प्रतिकायों का निर्माण करती है और उनका स्राव करती रहती हैं। ये बने हुए प्रतिकाय ही प्रतिजनों को निष्क्रिय करते हैं और उन जीवाणुओं को नष्ट करते हैं जिन पर वो प्रतिजन उपस्थित होता हैं।

बी–कोशिकाओं की भाँति ही टी–कोशिकाओं का भी निर्माण आस्थिमज़्जा से ही होता है परन्तु वे पहले थाइमस ग्रान्थि में पहुँचती हैं जहाँ उनका परिपवन होता है। परिपक्व टी कोशिकाओं की सतह पर भी ग्राही गुरुअणु उपस्थित होते हैं जिन्हें टी कोशिका ग्राही कहते हैं। ये टी कोशिका ग्राही केवल एम.एच. सी. अणु से बद्ध प्रतिजनों के साथ ही बन्ध बना पाता है जब कि प्रतिकाय स्वतंत्र प्रतिजनों से भी बन्धन बना लेता है। टी कोशिकाओं के दो पूर्ण–परिभाषित उप समूह ज्ञात हैं –

सहायक टी कोशिकाएँ (टी–एच सेल्स) और कोशिका विषाक्तकारी टी कोशिकाएँ (साइटोटॉक्सिक टी सेल्स, टी–सी सेल्स) जिन टी कोशिकाओं की सतह पर सी.डी.–4 नामक गुरुअणु होता है उन्हें सहायक टी कोशिकाएँ कहते हैं और जिन पर सी.डी.–8 नामक गुरुअणु होते हैं उन्हे कोशिका–विषाक्तकारी कोशिकाएँ कहते हैं। टी.सी कोशिकाएँ टी–एच कोशिकाओं की सहायता से कोशिका विषाक्तकारी कोशिकाओं में परिवर्तित हो कर उन कोशिकाओं को नष्ट करती है जिनमें विषाणु उपस्थित हों या जिनमें ट्यूमर बनने की सम्भावना हो या जो किसी बाहरी ऊतक के रोपण से आयी हों। जिन कोशिकाओं को कोशिका विषाक्तकारी कोशिकाएँ नष्ट करती हैं उन सभी में प्रतिजन एम.एच.सी–1 नामक गुरुअणु के साथ जुड़ा रहता है और ऐसी सभी कोशिकाएँ ''परिवर्तित स्वयं–कोशिका'' कहलाती हैं। इस प्रकार हमारा प्रतिरक्षी तंत्र प्रतिकायों (ह्यूमोरल रेस्पाँस) के माध्यम से या/ और कोशिका–माध्यित (सेल–मेडिएटेड रेस्पाँस) विधि से विभन्न प्रकार के जीवाणुओं, विषाणुओं, रोगाणुओं, और अन्य प्रतिजनें से अतिविशिष्ट एवम् चयनित रूप से हमारी रक्षा करता है। हमारा स्वस्थ शरीर एवम् शक्तिशाली प्रतिरक्षी तंत्र हमें विभिन्न प्रकार के संक्रामक रोगों से हमें बचाता है।

जन्म लेने के तुरन्त बाद नवजात शिशु में प्रतिरक्षा तंत्र अविकसित होता है। अतः यह प्रश्न स्वाभाविक है कि आखिर एक नवजात शिशु का शरीर फिर अपनी रक्षा कैसे करता है। वस्तुतः एक नवजात शिशु में जन्म के तुरन्त बाद मे ंही उसके प्रतिरक्षी तंत्र का विकास शुरू होता है और लगभग छः माह में उसमें एक विकसित प्रतिरक्षी तंत्र स्थापित हो जाता है। विकास के इन छः महीनों में शिशु का विभिन्न रोगाणुओं से बचाव बच्चे के शरीर में माँ के रक्त से प्राप्त प्रतिकाय करते हैं। शिशु के जन्म के तुरन्त बाद माता के स्तनों से निकलने वाला गाढ़ा पीला दूध, जिसे कोलोस्ट्रम कहते हैं, प्रतिकायों की प्रचुर मात्रा रखता जिसे आहार रूप में ले कर शिशु का शरीर अपना बचाव करता है। इसीलिए माताओं को चिकित्सक यह परामर्श देता है कि बच्चे को शुरू के छः माह तक केवल माता के स्तनों से निकला दूध ही आहार के रूप में दिया जाय और उसके अतिरिक्त कुछ भी नही यहां तक कि पानी भी नहीं।

इन प्राकृतिक विधियों के बावजूद भी शिशु को और सुरक्षा की आवश्यकता होती है क्योंकि हमारा परिवेश काफी प्रदूषित और संक्रमणकारी हो गया है। शिशु को इसके अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान करने के लिये विभिन्न प्रकार के टीके विकसित किये गये हैं। उदाहरणार्थ डीपीटी, पोलियो, मीज़ल्स, टी.बी. हेपेटाइटिस आदि के टीके। टीके जीवित रोगाणुओं, अक्रिय किये गये रोगाणुओं, रोगाणुओं के शरीर से निकाले गये प्रतिजनों या कृत्रिम विधि से प्रयोगशाला में उत्पन्न प्रतिजनों के रूप में होते हैं। इनको विभिन्न प्रकार के संरूपणों (फॉर्म्यूलेशन्स) में बना कर सूइयों द्वारा या मुख से दिये जाने वाली बूँदों द्वारा शिशु के शरीर में पहुँचाया जाता है। शिशु के शरीर में विकसित हो रहा प्रतिरक्षी तंत्र इन प्रतिजनों के लिये प्रतिकायों, स्मृति कोशिकाओं, टी. एच. एवम् टी.सी. कोशिकाओं का शनैः–शनैः निर्माण करता है। इसलिए यह अत्यन्त अनिवार्य है माता–पिता शिशुओं के लिए निर्धारित टीकाकरण का पूरा कोर्स समय से अपने शिशुओं को दिलाएँ ताकि शिशु विभिन्न प्रकार की संक्रामक और जानलेवा/ विकृतिकारी रोगों से सुरक्षित रहे।

बड़े होने पर भी हमें कुछ टीकों की आवश्यकता होती है। यह केवल उन रोगों के लिये होती है जिनके लिये हमारे शरीर में बनी स्मृति कोशिकाओं का जीवन काल कम होता है। जैसे कि टिटेनस का टीका। कुछ अन्य रोगों जैसे एड्स, कैंसर आदि के लिये भी टीकों का विकास विश्व की विभिन्न प्रयोगशालाओं में किया जा रहा है। यहाँ यह विशेष उल्लेखनीय है कि एक रोग, छोटी चेचक, को टीकों के प्रयोग से दुनिया के पटल से सदा–सर्वदा के लिये मिटा दिया गया। एक अन्य रोग जो विकृतकारी है वह है पोलियो। हमारे देश भारत में टीकों की सहायता से इसका पूर्णरूप से उन्मूलन कर दिया गया हैं।

अन्त में, मैं इतना ही कहना चाहूँगा कि हम अपने परिवेश को अत्यन्त स्वच्छ और प्रदूषण मुक्त रखें ताकि हमारा शरीर स्वस्थ हो और हमारा प्रतिरक्षी तंत्र अत्यंत सबल !!!

जैव प्रतिरक्षाविज्ञान गीत

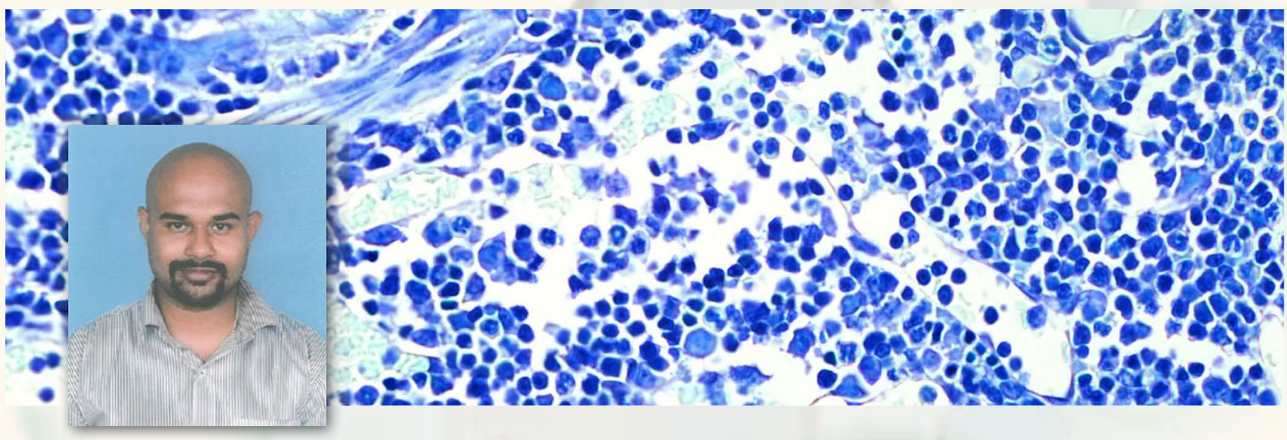

अनुज चक्रवर्ती
पीडीसी–1, रा.प्र.सं.

मानव संरचना के बोध का
एक अभिन्न भाग हूं मैं
वैसे तो हूं अर्दना सा
कहते प्रतिरक्षाविज्ञान हूं मैं।

पीढ़ियों के ज्ञान से मैंने
सीखा है रक्षा की शैली,
तुम जितना जानोगे मुझको
उतना मैं लगुँगा एक पहेली।

वैसे मुझे भी बाँटा तूने
कहा मेरे दो भाग हैं,
एक को बोला इनेट और
दूसरा एडेप्टिव संभाग है।

जब कोई जीवाँणु
मानव तुझमें आ जाता है,
पहली ड्यूटी है इनेट की
वो उसको साफ करती है।

लेकिन जब कोई उसको
अपनी माया जाल में उलझाता है,
याद हमेंशा रखना
एडेप्टिव बचाव में आता है।

वो आ करके उसको
डेंड्रिटिक सेल से पीटवाता है,
फिर उसके टुकड़ों को
टी सेल के समक्ष ले जाता है।

फिर ना पूछो हालत
क्या होती उस कीटाणु की,
मंजर होता कुछ वैसा जैसे
जापान पर गिरे परमाणु सा।

इसी तरह मैं हर दिन
तेरे अंदर लड़ता हूँ,
ना हो जाए तुझे बीमारी
इसी बात से डरता हूँ।

फिर भी ये जीवाँणु
इतने में ही पस्त नहीं,
ढूंढ लेते हैं रास्ता
इनके उदय का अस्त नहीं।

मेरे कोशिकाओं का
जीवन बहुत संक्षिप्त है,
जितना भी ये जीती हैं
मानव सेवा में निरलिप्त हैं।

शोधकार्य में हाथ बाँट के
अब तू भी अनुदान कर,
और मुझे तू जान जरा
कुछ मेरा भी सम्मान कर।

इसी तरह से मिलकर हम
तेरा कल बदल देंगे,
नये शोधों की रोशनी में
तुझे भविष्य उज्ज्वल देंगें।

एच आई वी, एड्स एवं रोकथाम के उपाय

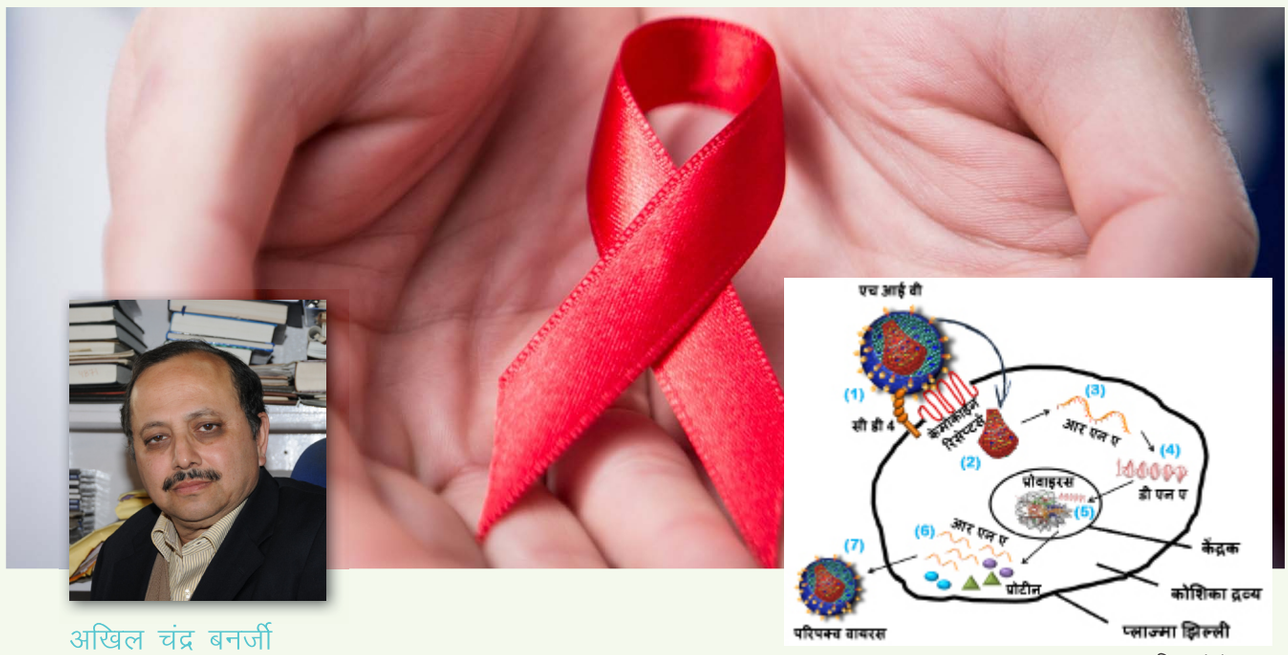

चित्र (अ)

अखिल चंद्र बनर्जी
एमेरिटस वैज्ञानिक, रा.प्र.सं.

एड्स एक भयानक बीमारी है और यह पूरे विश्व में फैल चुकी है। यह एच.आई.वी. नामक विषाणु के कारण होता है। एड्स का पूरा नाम ''एक्वायर्ड इम्यूनो डेफिशियन्सी सिंड्रोम है। भारत वर्ष में करीब 2.1 लाख व्यक्ति इस रोग से ग्रसित हैं। विश्व स्तर पर चिकित्सक एवं वैज्ञानिक इस बीमारी के रोकथाम का प्रयास कर रहे है, किंतु अभी इसमें सफलता नहीं मिली हैं। एड्स से लड़ने की दवाइयां (एण्टी रीट्रोवायरल औषधि) इस विषाणु को रोकने में काफी सफल हुए हैं, किंतु निरंतर प्रयोग से इसके प्रति रेजिस्टेंस पैदा हो जाता है। अतः इस विषाणु की रोकथाम के लिए ''टीका'' ही एक मात्र उपाय है – और इसके लिए विश्व स्तर पर प्रयास चल रहे हैं।

एड्स के फैलने के कारण :

1. स्त्री पुरूष के बीच संभोग से
2. दूषित सुई
3. एड्स ग्रसित व्यक्ति के रक्त से
4. महिला गर्भ से गर्भस्थ शिशु में

उपरोक्त कारणों से ही यह बीमारी फैल सकती है। यह विषाणु धीरे–धीरे शरीर की प्रतिरोधक क्षमता समाप्त करता जाता है। प्रतिरोधक क्षमता को प्रदान करने में टी कोशिका और मैक्रोफेज़ेस की अहम भूमिका होती है, और यह विषाणु इन्ही सेल्स में पनपता है। यह हाथ मिलाने अथवा मच्छर आदि के काटने से नहीं फैलता है।

इस चित्र 'अ' के माध्यम से यह दर्शाया गया है कि एच. आई. वी. किस तरह से हमारे कोशिका में प्रवेश करता है और हमारे न्यूक्लियस का अंग बन जाता हैं।

1. विषाणु का प्रवेश
2. प्रवेश एंव साइटोप्लास्म में उपस्थिति
3. विषाणु आर. एन. ए. का बाहर आना
4. आर. एन. ए. से डी. एन. ए. बनना।
5. विषाणु का डी. एन. ए. कोशिका के डी. एन. ए. से जुड़ना
6. डी. एन. ए. से आर. एन. ए. बनना आर. एन. ए. से प्रोटीन एवं परिवर्तित विषाणु का निर्माण और कोशिका से निष्कासन एड्स विषाणु को रोकथाम करने के लिए दवाई विकसित की गई है और इसका सेवन करके रोगी सामान्य जीवन व्यतीत कर सकते हैं। अतः हमें एड्स से ग्रसित लोगों के प्रति सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार करना चाहिए।

इस रोग के रोकथाम करने के लिए प्रयास करने चाहिए। लोगों के बीच इस विषाणु से बचने के उपाय बताकर जागरूकता बढ़ानी चाहिए।

चित्र (अ) में यह दर्शाया गया है कि विषाणु किन सेल्स पर आक्रमण करता है और हमारी प्रतिरोधक क्षमता को क्रमशः समाप्त करता है। (टी) और (बी) सेल्स की भूमिका बताई गई है।

एड्स पर शोध कार्य एंव टीका बनाने के उपायः आधुनिक शोध इस विषय पर किया जा रहा है कि यह विषाणु किस प्रकार से हमारे सेल्स, विशेषकर (टी) और (बी) सैल्स की प्रतिरोधक क्षमता को समाप्त करता है। इस खोज से रोकथाम के नए अवसर प्राप्त होंगे। हमें टीका द्वारा इस विषाणु को पनपने से रोकना होगा। इसमें एंटीबॉडी और टी–साइटोटोक्सिक सेल्स की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ानी होगी। इस क्षेत्र में मौलिक अनुसंधान की विशेष आवश्यकता है।

सुविचार संग्रह

हरेंद्र सिंह
कार्यपालक अभियंता, रा.प्र.स.

जिस धागे की गाठें खुल सकती हैं, उस धागे पर कैंची नहीं चलनी चाहिए। किसी की कोई बात बुरी लगे तो, दो तरह से सोंचें, यदि व्यक्ति महत्वपूर्ण है, बात भूल जाएं और, बात महत्वपूर्ण है तो, व्यक्ति को भूल जाएं! सफलता हमेशा अच्छे विचारों से आती है..... और अच्छे विचार अच्छे लोगों के संपर्क से आते हैं.....कोई भी मनुष्य किस बात को, किस प्रकार से समझता है, यह उसकी मानसिकता तय करती है।

कोई दूसरों की थाली से भी, छीन कर खाने में अपनी शान समझता है, तो कोई अपनी थाली में से दूसरों को, निवाले खिलाकर संतुष्ट होता है। लेकिन एक बात तो तय है कि छीन कर खाने वालों का कभी पेट नहीं भरता और बाँट कर खाने वाले, कभी भी भूखे नहीं रहते।

जीवन धारा से जुड़े कुछ विचार

सूर्य से निकलने वाली ध्वनि इतनी कम आवृति की है कि हम इसे अपने कानों से नहीं सुन सकते। नासा ने इस ध्वनि को रिकॉर्ड किया है। जब इसकी आवृति को बढ़ाकर सुना गया तो यह ऊँ की ध्वनि पायी गई। यह आश्चर्य की बात है। हजारों वर्ष पूर्व वेद लिखने वालों ने इसे कैसे सुना, यह प्रश्न अनसुलझा है, लेकिन यह वेदों की महत्ता और महानता को सिद्ध करता है।

1 सोते रहो
2 उठो देर से
3 नहाओ मत
4 देखते रहो टी. वी।
5 आराम करो आज
6 याद करो मुझे

इस जगत का सर्वाधिक आश्चर्य जनक नियम हैः जो गड्ढे तुम दूसरों के लिए खोदते हो उनमें स्वयं गिरना पड़ता है। फिर तुमने गड्ढे जानकर खोदे हों या अनजाने में खोदे हों। जो कांटे तुम दूसरों के लिए बोते हो वे तुम्हारे ही पैरों में छिदेंगे।

कहानी तीन अच्छे मित्रों की ज्ञान, धन और विश्वास की। तीनों बहुत अच्छे मित्र थे, तीनों में प्यार भी बहुत था, एक वक्त आया जब तीनों को जुड़ना पड़ा, तीनों ने एक दूसरे से सवाल किया कि हम कहाँ मिलेंगे।

ज्ञान : मैं मंदिर, मस्जिद और विद्यालय में मिलूंगा।

धन : मैं अमीरों के पास मिलूंगा।

विश्वास चुप था, दोनों ने चुप होने की वजह पूछी तो विश्वास ने रोते हुए कहा : मैं एक बार चला गया तो फिर कभी नहीं मिलूंगा।

विज्ञान संदेश

निशा
कनिष्ठ अनुवादक, रा.प्र.स.

ब्लड शुगर में उतार–चढ़ाव तथा डिप्रेशन

इजराइल की तेल अवीव युनिवर्सिटी के शेबा मेडिकल सेंटर के शोधकर्ता डॉ. रामित रवोना–स्प्रिंगर की शोध से जाहिर हुआ कि ब्लड शुगर के भारी उतार–चढ़ाव का सेहत पर बुरा प्रभाव पड़ता है। खास तौर पर टाइप–2 डायबिटीज पीडितों के लिए यह ठीक नहीं है। ऐसे रोगियों में ग्लाइसेमिक (ब्लड शुगर) को स्थिर करना ज्यादा जरूरी होता है। इससे डिप्रेशन के लक्षणों के रोकथाम में मदद मिल सकती है। यह निष्कर्ष प्रतिभागियों पर किए गए अध्ययन के आधार पर निकाला गया है। टाइप–2 डायबिटिस से पीड़ित बुजुर्गों में हीमोग्लोबिन ए1 सी (एचबीए1 सी) के स्तर में भारी उतार–चढाव ठीक नहीं है। नए शोध में पाया गया है कि इसका अवसाद से गहरा जुड़ाव होता है। एचबीए1 सी दीर्घकालिक ब्लड शुगर के स्तर की निशानी है।

बिना क्रीम वाला दूध पीने से नुकसान

वैज्ञानिकों का मानना है कि जितना ज्यादा स्किम्ड दूध का सेवन किया जाता है, खतरा उतना ही अधिक बढ़ जाता है। कम वसा वाला या स्किम्ड दूध पीने वालों के लिए बुरी खबर है। आधुनिक शोध में पाया गया है कि बिना क्रीम वाले दूध का सेवन करने से पार्किसन का खतरा बढ़ जाता है। पार्किसन केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से जुडी बीमारी है, इसमें व्यक्ति के हाथ–पैर कांपने लगते हैं और उसे संतुलन बनाने में परेशानी होती है।

डायबिटीज जांच करने का सही तरीका

अमरीकी शोधकर्ताओं के अनुसार, इंसुलिन के साथ टाइप–2 डायबिटीज का इलाज कराने वाले कई रोगी आम तौर पर घर पर ही ब्लड शुगर की जांच करते है। इसकी मदद से वे इलाज की निगरानी करते है।

यू.एन.सी. स्कूल ऑफ मेडिसिन के शोध के अनुसार, फिगर–स्टिक टेस्ट से खास मदद नहीं मिलती है। शोध से जुडी प्रोफेसर केट्रीना डोनाहुए ने बताया कि टाइप–2 डायबिटीज में इंसुलिन न लेने वाले रोगियों में इस जांच की उपयोगिता सीमित होती है। यदि आप टाइप –2 डायबिटीज से पीडित है और घर पर खुद ही फिंगर–स्टिक टेस्ट (एक बूंद खून से होने वाली जांच) करते हैं तो सतर्क हो जाइए। वैज्ञानिकों ने इस जांच पर सवाल उठाते हुए कहा कि यह जांच सटीक नहीं होती, उनका दावा है कि इसुंलिन इस्तेमाल नहीं करने वाले रोगियों को फिंगर–स्टिक से जांच में कोई खास मदद नहीं मिलती है।

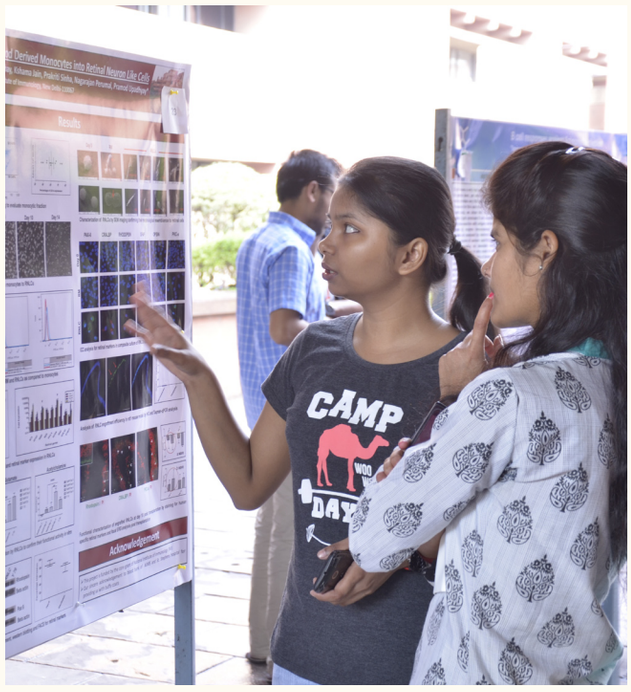

थेरेपी द्वारा किया जा सकता है अस्थमा को ठीक

वैज्ञानिकों ने अस्थमा को ठीक करने के लिए तरह–तरह के प्रयोगों से पता लगाया है । इसकी मदद से जिंदगी भर के लिए अस्थमा जैसी बीमारियों से छुटकारा पाना संभव हो सकता है। आस्ट्रेलिया की यूनिवर्सिटी ऑफ क्वींसलैंड के शोधकर्ताओं ने इस बारे मे शोध को अंजाम दिया उन्होंने जानवरों में एलर्जी के प्रति प्रतिरक्षा प्रणाली की प्रतिक्रिया को रोकने में सफलता हासिल की। शोधकर्ता रे स्टेपटो ने कहा, एलर्जी या अस्थमा में जो लक्षण दिखाई देते हैं वे प्रतिरक्षा कोशिकाओं की प्रतिक्रिया के कारण ही होते हैं। अस्थमा और एलर्जी के इलाज में भी सबसे बड़ी चुनौती यही कोशिकाएं बनती है, अब हमने विशेष डीएनए को लक्ष्य बनाकर इस परेशानी को दूर करने का तरीका खोजा है। वैज्ञानिकों ने कहा कि अगला कदम इस प्रयोग को मानव कोशिकाओं पर आजमाना है।

चावल के प्रयोग से कैंसर, डायबिटीज का खतरा हुआ कम

मुताबिक, फल और मछली की अधिकता और सॉफ्ट ड्रिंक के कम सेवन से केलोरेक्टल कैंसर का खतरा 86 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है कोलोरेक्टल कैंसर मुख्यतः कम फाइबर वाले और रेड मीट की अधिकता वाले भोजन से होता है इजराइल की तेल अवीव मेडिकल सेंटर के नाओमी फ्लिस इसाकोव ने कहा, कि भोजन में बदलाव से कैंसर होने की आशंका भी कम या ज्यादा हो जाती है, जिन लोगों ने मछली, फल के ज्यादा सेवन और सॉफट ड्रिंक के कम इस्तेमाल की आदत अपनाई, उनमें कैंसर का खतरा 86 प्रतिशत तक कम पाया गया है। शोध के दौरान 40–70 साल की उम्र के 80 प्रतिशत लोगों को शामिल किया गया था। शोधकर्ताओं ने कहा कि भोजन में इनमें से कोई एक आदत शुमार करना भी सेहत के लिए फायदेमंद है।

रेटिना को दुबारा से नया बनाने में मिली सफलता

वैज्ञानिकों ने एक वयस्क चूहे से रेटिना कोशिकाओं को दुबारा से नया बनाने मे कामयाबी हासिल कीं है। इस तकनीक के कारगर रहने पर मनुष्यों में दृष्टिहीनता को दूर करने का नया तरीका मिल सकता है । वैज्ञानिकों ने बताया कि हमारे शरीर में कई तरह के ऊतक होते है, जो क्षतिग्रस्त होने पर अपने घाव को भर लेते हैं। ऐसा इनमें उपस्थित स्टेम कोशिकाओं की वजह से होता है, जो खुद को जरूरी कोशिकाओं के रूप मे ढालने में सक्षम होती हैं। अमेरीका स्थित यूनिवर्सिटी ऑफ वाशिंगटन के शोधकर्ताओं ने पाया कि जब्राफिश में रेटिना की मरम्मत करने को भी क्षमता होती है। यह एक खास जीन की वजह से होता है।

इस प्रोटीन से किया जा सकता है हार्ट अटैक का बचाव ब्रिटेन के किंग्स कॉलेज लंदन के शोधकर्ताओं ने 574 लोगों के खून के नमूनों में प्रॉटीन 3 (डीकेके 3) के स्तर को मापने पर पाया कि जिन लोगों के खून मे डीकेके 3 का स्तर उच्च रहा, उनमें हार्ट अटैक या स्ट्रोक से मरने की आशंका कम पाई गई। इस शोध मे जुडे प्रोफेसर किंगबोशु ने कहा कि हमारे काम से जाहिर हुआ कि हम सामान्य रक्त जांच से ऐसे स्वस्थ लोगो को पहचान कर सकते है। जिनमें दिल का दौरा पड़ने का खतरा हो सकता है। इससे डीकेके3 के स्तर को बढ़ाने और हार्ट अटैक या स्ट्रोक के खतरे से बचाव मे मदद मिल सकती है। शोधकर्ताओं को हार्ट अटैक ओंर स्ट्रोक से बचाव मे बड़ी सफलता मिलीं है। उन्होंने शरीर में स्वाभाविक रूप से बनने वाली ऐसी प्रॉटीनं की पहचान को है, जो इन स्थितियों से बचाव कर सकता है। इस खोज में धमनियों में वसा जमने से रोकने का नया उपचार विकसित करने में मदद मिल सकती है।

देश के सतत विकास और प्रगति के लिए स्टार्टअप एक महत्त्वपूर्ण पहल

नीरजा वाधवा
तकनीकी अधिकारी, रा.प्र.स.

भारत देश एक लोकतंत्र, जनसंख्या एवं माँग का अनोखा मिश्रण है। भारत विविधिताओं का देश है जिसकी लोकप्रियता पूरी दुनिया में अपनी कार्यशैली, तेज दिमाग, नवीनतम विचार एंव उच्च कौशल के लिए विख्यात है। हांलाकि ठोस समर्थन एंव सही दिशा न मिलने के कारण भारत विकासशीलता के पथ पर ही रह गया है। भारत की बढ़ती जनसंख्या 1–3 बिलियन के आकड़े को पार कर चुकी है। इसी बढ़ती जनसंख्या ने कई तरह की समस्याँए उजागर कर दी हैं जिसमें ''बेरोजगारी'' सबसे गंभीर समस्या है। देश में लगभग 800 मीलियन युवा वर्ग है, जिसकी आयु 35 साल से कम है। देश के युवा वर्ग को इस समस्या का सबसे अधिक सामना करना पड़ रहा है। देश का युवा वर्ग खुद में परिवर्तन के लिए तैयार है, वह समाज में परिवर्तन लाने की ऊर्जा रखता है, राष्ट्र की आर्थिक अवस्था को बदल की क्षमता रखता है, फिर भी समस्या से जूझ रहा है।

इसी बेरोजगारी की समस्या का निवारण करने के लिए भारत सरकार ने देश के युवा वर्ग के लिए एक नई योजना का शुभारम्भ किया।

इस नई योजना को ''स्टार्ट अप–स्टेड अप'' योजना के नाम से सम्बोधित किया गया। स्टार्ट–अप स्टेड–अप योजना के बारे में प्रधानमंत्री जी ने 15 अगस्त, 2015 को लालकिले से घोषणा की एवं 16 जनवरी, 2016 को इसका शुभारम्भ किया गया। यह योजना प्रधानमंत्री की ''मेक इन डंडिया'' योजना की दूसरी कड़ी है जिसका शुभारम्भ, 2014 में किया गया था।

स्टार्ट आप–स्टेड अप योजना की परिभाषाः–

स्टार्ट अप का अर्थ है देश के युवा वर्ग के लिए, जो अपना उद्योग या व्यवसयाय शुरू करना चाहते है, उनके लिए बैकों के माध्यम से वित्तीय सहायता प्रदान करना ताकि उनकी शुरूआत मजबूती के साथ हो। स्टार्ट–अप कम्पनी केवल एक व्यक्ति या अनेक व्यक्तियों द्वारा शुरू की जा सकती है। स्टार्ट अप उस युवा वर्ग के लिए है, जो उद्यमी एवं उद्योगपति बनना चाहते है, श्रमी है लेकिन पूंजी की कमी है। इस योजना के तहत 125 लाख बैकों की शाखांए ऐसे युवा वर्ग को ऋण प्रदान करके प्रोत्साहित करेंगी।

स्टार्ट अप एवं युवा वर्ग

देश का युवा वर्ग प्रतिभावान है, नवीनतम विचारों वाला है, नई दिशाओं एंव नए रास्तों पर चलने वाला है, उच्च कौशल वाला है, ताजा एवं तेज दिमाग वाला है इसलिए स्टार्ट अप के लिए बेहतर है।

स्टार्ट अप की कार्य योजना की कुछ प्रमुख बातें

स्टार्ट अप से होने वाली आय पर तीन साल के लिए आयकर विभाग ने छूट दे दी है। सरल फार्म बनाए गए है। पटेंट एप्लीकेशन में भी 80% छूट दी गई है। देश का 2500 करोड़ रूपया केवल स्टार्ट अप योजना के लिए रखा गया है। इसमें जैव प्रौदयोगिकी एवं विज्ञान प्रौदयोगिकी की मंत्रालयों को शामिल किया गया है ताकि वे युवा वर्ग का मार्ग दर्शन एवं संरक्षण कर सके। भारत के उच्च शिक्षा संस्थाओं जैसे आई. आई. टी., आई. आई. एम. को मार्गदर्शन के लिए शामिल किया गया है।

स्टार्ट अप का उद्देश्य

स्टार्ट अप के दो उद्देश्य हैः– 1. रोजगार 2. आर्थिक विकास।

क्या सभी को शिक्षित करने से ही एक सभ्य समाज की कल्पना संभव है ?

अश्वनी केशवानी
रिर्सच स्कोलर, रा.प्र.स.

शिक्षा क्या है? यदि हम इस शब्द को गौर से समझे तो ये पता चलता है कि हमारे आस–पास समाज में होने वाली छोटी–बडी चीजें ही जो हमारे व्यक्तित्व के सजाने सवारने और निखारने में एक सहज कार्य करती है वो शिक्षा है। पुरातन समय से ही शिक्षा का एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है, हम अपने और समाज की उन्नति के लिए, पहले अपने माता–पिता और परिवार के बडे लोगों से शिक्षा लेते है जो हमारे व्यक्तित्व की एक महत्वपूर्ण इकाई होती है, फिर हम पाठशाला एवं विद्यालयों में शिक्षा ग्रहण करते है जिससे ना केवल व्यक्तित्व बल्कि सामाजिक तौर पर हमारे को निखारती है।

मेरे ख्याल में एक व्यक्ति के लिए शिक्षा प्राप्त करना एंव शिक्षित होना बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। चाणक्य ने कुछ इसी बात को बहुत ही अच्छे शब्दों में लिखा है कि – ''एक शिक्षाहीन व्यक्ति शिक्षित लोगों के बीच उसी प्रकार होता है जैसे हंसों के बीच बगुला।''

शिक्षित व्यक्ति उस इकाई की तरह है जो एक शिक्षित और सभ्य समाज के उत्थान के लिए होते हैं। हमें शिक्षित होकर ना केवल अपने घर–परिवार को बल्कि पूरे समाज को आगे ले चलने की भावना रखनी चाहिए। हम अपनी शिक्षा को जब तक अपने निजी जीवन में नहीं अपनायेगें, तब तक हम एक अच्छे समाज, एक जागरूक समाज की कल्पना नहीं कर सकते। अपने अच्छे आचरण से हम एक समृद्ध समाज बना सकते हैं। मेरे ख्याल से – 'शिक्षा प्राप्त करना एक गुना, उसका मनन करना दो गुना, और उसका आचरण करना, हजार गुना के बराबर है।''

जैसा कि हम जानते है हर दिन, हर घंण्टा, हर मिनट हमें कुछ ना कुछ सीखने को मिलता है और उसमें से कुछ अच्छी बाते होती है और कुछ गलत बातें, हमें इस सही और गलत के बीच में जो एक महीन पंक्ति है उसे समझना है और अपने आचरण में लाना है। एक समय समाज की कल्पना बहुत छोटी बात नहीं है, क्योंकि उसके लिए व्यक्ति विशेष को सभ्य बनना

पड़ेगा। हमे अपने व्यक्तित्व को निखारना पड़ेगा और इस बात पर जोर डालना पड़ेगा कि समाज की उन्नति के लिए वो खुद जिम्मेदार हैं।

मेरा मानना है कि यदि हम समाज के प्रत्येक व्यक्ति के शिक्षा का महत्त्व समझाने में कारगर हो जाते हैं तो हम एक सभ्य सामाज का निर्माण कर सकते हैं। जिस प्रकार एक मकान बनाने के लिए अगर हम मजबूत ईट (प्रत्येक व्यक्ति विशेष) और अच्छा सीमेंट (शिक्षा) इस्तमाल करते हैं तो एक मजबूत और टिकाऊ घर बनता है, उसी प्रकार सही शिक्षा और सभ्य समाज एक दूसरे के पूरक होते हैं।

हमें इस बात को कत्तई नहीं भूलना चाहिए कि, जो अच्छे आचरण वाला व्यक्ति समाज में है, वह उन लोगों को भी अच्छे आचरण करने पर मजबूर कर सकता है। जिसका आचरण और शिक्षा कमजोर वह नहीं।

हमें इस बात को कभी भी नहीं भूलना चाहिए कि यदि कोई व्यक्ति शिक्षित है तो उसका आचरण भी अच्छा होगा और यदि कोई व्यक्ति अशिक्षित है तो उसका आचरण बुरा या खराब होगा। वह समाज के निर्माण में कोई भागीदारी नहीं दे सकता। हर व्यक्ति किसी ना किसी तरह से समाज को समृद्ध बना सकता है, हाँ गलतियाँ हो सकती है पर :–

''कोई भी व्यक्ति पूरी तरह गलत नहीं होता,बन्द घड़ी भी दिन में कम से कम दो बार सही समय दिखाती है''

हमें समझना है, तो उनके अन्दर के दोष को, और यदि ऐसा व्यक्ति एक शिक्षित एंव समृद्ध व्यक्ति की छत्रछाया में रहेगा तो जरूर ही आगे चलकर एक सभ्यसमाज के निर्माण में मदद करेंगा। ऐसा कहीं नहीं बताया गया कि बड़े–बड़े स्कूलों एवं विश्वविद्यालयों में ही अच्छी शिक्षा मिल सकती है, अच्छी शिक्षा तो व्यक्ति को अपने माँ–बाप, घर से भी मिल सकती है, जो कि हमें अच्छे आचरण करने की शिक्षा देती है। शिक्षा की जरूरत उसी प्रकार से महत्त्वपूर्ण हो जाती है जैसे एक व्यक्ति के लिए अच्छी वेष–भूषा। हमें धूप, ठंड और बरसात से बचने के लिए कपड़ो की जरूरत पड़ती है उसी प्रकार से अपने व्यक्तित्व को समझने के लिए, उसे निखारने के लिए एंव समाज को आगे बढ़ाने के लिए शिक्षा की जरूरत पड़ती है। ना केवल शिक्षा को लेकर समाज में रहने बल्कि उसे अपने जीवन में अपनाने और उसका आचरण करने की भी जरूरत है।

आज की इस भागदौड़ की जिन्दगी में जहाँ किसी के पास समय नहीं है, उस दौर में, शिक्षा और उसका सही आचरण करना एक सभ्य समाज को जन्म दे सकता है।

''सभ्य समाज है अगर बनाना,
शिक्षा और सही आचरण है अपनाना।''

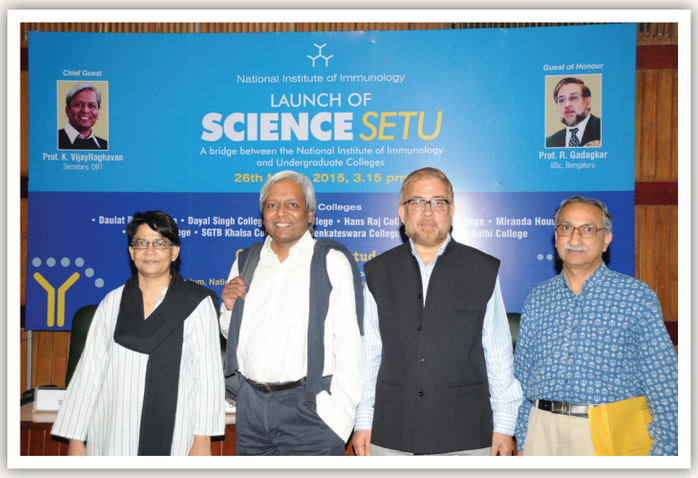
Chief Guest
Prof. K. VijayRaghavan
Secretary, DBT
National Institute of Immunology
LAUNCH OF
SCIENCE SETU
A bridge between the National Institute of Immunology and Undergraduate Colleges
Guest of Honour
Prof. R. Gadagkar
IISc, Bengaluru

संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति द्वारा
निरीक्षण
4 अक्तूबर, 2017, नई दिल्ली

National Institute of Immunology
Seminar
Want to hear about a systems biologist's perspective
on the complexities of the immune compartment?
Join us on 13th December to hear about it.....
Why do lymphocytes behave
npredictably?
Speaker

VISUALISING SCIENCE

राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान
नई दिल्ली-67
हिंदी पखवाड़ा

कार्यशाला

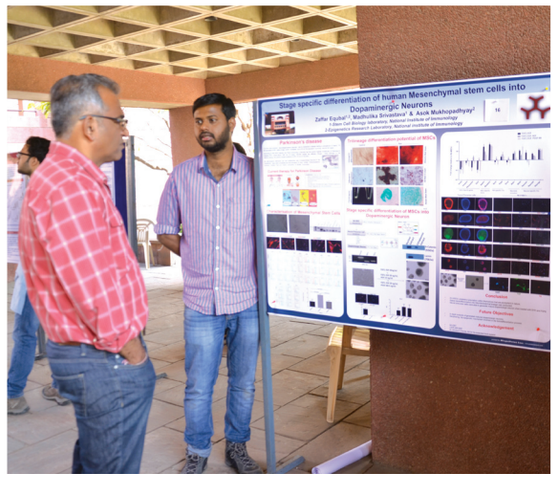
Stage specific differentiation of human Mesenchymal stem cells into
Dopaminergic Neurons

लक्ष्य

केवल सिंह
कनिष्ठ सहायक, प्रशासन विभाग, रा.प्र.स.

चलो तुम पथ पे, बढ़ो तुम पथ पे,
रूको नहीं थमों नहीं बढ़े चलो तुम अपने लक्ष्य पे।

जो रूका, बढ़ा नहीं, जो झुका, उठा नहीं,
विश्वास पे डटे रहो, बढ़े चलो, थमों नहीं,
तुम अपने लक्ष्य पे।

हारो तो जीतना सीखो, कर दुगना हौसला।
क्या कमी रह गई देखो और उसमें सुधार करो।
रूको नहीं, थमो नहीं, बढ़े चलो तुम अपने लक्ष्य पे।।

तीर अर्जुन ने चलाया सफल हुआ,
लक्ष्य में भेद आँख मछली की,
लक्ष्य में हुआ सफल,
बढ़े चलो, थमो नहीं, तुम अपने लक्ष्य पे।

बढ़े चलो पर्वतराही रूके नहीं,
उनके कदम राह में लांघ के पहाड़ और बर्फ को,
आखिर पहुँच गये अपने लक्ष्य पे।।

चढ़ गए हिमालय के, शिखर पे उत्साह दुगना हुआ,
कठोर पीड़ा सह गये लक्ष्य में सफल हुए रूके नहीं हटे नहीं,
वह अपने लक्ष्य से,
रूको नहीं, थमों नहीं, बढे चलों तुम अपने लक्ष्य पे।

सूखी भूमि सींच के किया उसे हरी–भरी,
पोषण किया समाज का उगा के अन्न खेत में,
सलाम है उस किसान को,
जो डटा रहा हटा नहीं कभी भी अपने लक्ष्य से।
रूको नहीं, थमों नहीं, बढे,चलो तुम अपने लक्ष्य पे।।

खा के गोली सीमा पे डटा रहा वीर सपूत,
भारत माँ की रक्षा के हित देख उस विशाल शत्रु को,
हटे नहीं उसके कदम बढ़ा के मान तिरंगे का,
डटा रहा भारत माँ का वह सच्चा वीर,
सलाम उस वीर को जो हटा नहीं अपने लक्ष्य से
रूको नहीं, थमो नहीं, बढ़े चलों तुम अपने लक्ष्य पे।

होके फेल शोध में,
नहीं हटा पीछे वह वैज्ञानिक
बना के अन्तरिक्ष यान को पहुँच गया मंगल–चाँद पे,
दिन–रात की वह कठोर मेहनत आखिर सफल हो गई,

धरती का मानुष आज, अन्तरिक्ष में चला गया,
परिश्रम एक कला है।
मेहनत एक कठोर तप है, जीवन एक चुनौती है,
सफलता–असफलता प्रकृति का नियम है।
गिर कर उठना, उठ कर गिरना
इस अभ्यास से हटो नहीं
रूको नहीं, थमों नहीं, बढ़े चलो तुम अपने लक्ष्य पे।।

पी.एच.डी. एक अनोखी यात्रा

प्रियंक सिंधवी
उत्पाद विकास प्रकोष्ठ; (PDC)-II, रा.प्र.स.

असफलताओं से थक कर पी.एच.डी. पार नहीं होती,
कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती।
एम.एस.सी कर सपने सजा के, जब कोई पी.एच.डी. करने आता है,
करता है एक्सपेरिमेंटस कई मरतबा, सौ बार फ्रस्टेट हो जाता है।
आंखो में सपना कुछ कर दिखाने का, रगों में साहस भरता है,
परिणामों का पाना, या ना पाना, अब कहां कुछ मायने रखता है,
आखिर उसकी हिम्मत बेकार नहीं होती,
कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती।

एक्सपेरिमेंटस लैब में पी.एच.डी., जब–जब करता है,
देख–देख अजीब–गरीब परिणाम, कई बार खिसियाता है,
मिलते नहीं सहज ही अच्छे परिणाम, तीसरे साल में भी
हैरान परेशान लगता है एक्सपेरिमेंटस, रातों में भी,
रातें उसकी खराब हर बार नहीं होती,
कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती।

अरे ऐसा भी क्या हो गया, अगर पेपर रिजेक्ट हुआ तो,
नहीं समझ पाया था संसार मैंडल के काम को भी तो,,
मात्र पेपर छापने के मकसद से ही,
मात्र बोस को प्रसन्न करने के उद्देश्य से ही,
मात्र पोस्ट डॉक के लालच से ही,
ना अपने से समझौता करो तुम,
अपनी जिज्ञासा को ध्येय बना कर ही,
अपने जुनून को ईंधन बना कर ही,
अपने काम को पूजा बना कर ही,
कुछ नया खोज डालो तुम,
खोजो तो कुछ ऐसा खोजो कि, तुम्हारे दिल–और–दिमाग को संतुष्टि मिले
नेचर, सैल, साइंस वाले भी, तुम्हारे काम को छापने के लिए तरसे,
सिर्फ नेचर छाप देने से ही, तुम्हारे नइयां पार नहीं होती,
कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती।

पारिस्थितिकी (इकोसिस्टम) तंत्र एवं मानव जीवन

डॉ. सुरेंन्द्र सिंह
पशु चिकित्सक, रा.प्र.सं.

अपने आस–पास का वातावरण उसमें रहने एवं जीने वाले सभी प्राणी जगत के चेतन अंश और जड़ पदार्थ जो चेतन को अपनी ऊर्जा तथा संरचना प्रदान करता है, साथ ही उसमें जीवन का प्रवाह व आवेग प्रदान कर निरंतर इसे गतिमान व परिवर्तनशील बनाए रखता है, वह है पारिस्थितिकी तंत्र।

भला मानव जीवन इससे अलग या भिन्न हो भी कैसे सकता है। यद्यपि समस्त मानव क्रियाकलाप विज्ञान सहित इसका एक हिस्सा मात्र है तथापि इसमें प्रमुख भूमिका निभाते हैं। आन्तरिक, बाह्य, बृहत, सूक्ष्म विस्तृत, मिश्रित आदि अनेकानेक इसके वर्ग व प्रकार हो सकते है, पर सभी के सभी मानव जीवन को छुए हुए हैं अर्थात मानव जीवन इससे कतई पृथक न है न हो सकता। फिर आज के युग में इसके प्रति इतनी नगन्य, शून्यता एंव संवेदनहीनता क्यों ? यह न तो पूर्वकाल में कभी देखी गई, ना ही अंकित हुई, चाहे वह विज्ञान का क्षेत्र हो, समाजिक क्षेत्र हो या फिर राज–काज हो, न हो किसी ने आकाश–पाताल, पहाड़ नदी वनों या मैदानों को छेड़ा और न ही किसी ने ऐसी शिक्षा का प्रचार–प्रसार किया।

फिर प्रश्न उठता है क्या मानव जीवन का यही उद्देश्य या सार्थकता है कि जो पुरखों ने पीढ़ी दर पीढ़ी संजो कर हमें सौंपा, हम उसे ध्वस्त करने के महापाप पर अग्रसित हों, कदापि नहीं। कम से कम प्रबुध भारती तो नहीं।

हमें अग्रणी होकर इस दिशा में कार्य करना होगा, अथक प्रयास करने होंगे, धरती माता को सुंदर बनाना होगा, धरती को बचाना होगा। इसके लिए अपने जीवन का एक–एक पल बहुमूल्य समझकर आने वाली पीढ़ीयों के लिए या कहें तो अपनी आत्मा के लिए अर्थात अपने बच्चों के लिए वहन करना होगा।

प्राचीन काल से पूर्वकाल तक मनुष्य ने पारम्परिक विज्ञान को अपने दैनिक जीवन का हिस्सा बनाकर प्रकृति, पर्यावरण एंव पारिस्थितिकी का संरक्षण किया तथा ज्यों का त्यों ही हमें सौंप दिया । इसके अनेक उदाहरण हमें आमजन, कृषक व बुद्धिजीवियों में वैज्ञानिक होने की पुष्टि कराते हैं। जैसे फसल बौने का समय, फसल कांटने का समय, अनाज का भण्डारण, जलाश्य संरक्षण, पहाडों–वनों की इफाजत, नदियों को जलधारा के साथ जीवनधारा स्वीकारना, फसल उत्पादों का मानव व पशुओं के लिए उचित उपयोग। यहां तक कि फसल व पशु अवशेषों का भी यथोचित उपयोग करना, सूखा अकाल बाढ़ भूचाल आदि से संघर्ष इत्यादि ने समस्त संसार को जीवनोपयोगी बनाएं रखा। कुछ दशक पूर्व भी चीजों का आवश्यकतानुसार उपयोग होता था। यहां तक कि कुछ एक

बाल्टी–लौटा जल से परिवार अपना काम चलाते थे, आज कारों को नहलाते दिखते हैं। जोहड, पौखर, तालाब छांटने को धर्म समझा जाता था, आज सम्प्रदायों में बटे खड़े हैं। गोबर की खाद से फसलों का पौषण होता था आज, कैंसर कारक रसायानों का प्रयोग हो रहा है।

नदियों को ब्रहम् (ईश्वर) का पुत्र या संजीवनी सरिता कहा जाता था आज कारखानों का मलबा डालकर दूषित कर रहे हैं। यमुना जी मरने के कगार पर हैं, गंगा जी भी जीने को तरस रही हैं।

नगर बसाना संसाधनों को योजनाबद्ध रूप देना होता था। आज इन्हें नगर से नरक एंव महानगर से महानरक तक पहुंचा रहें हैं। मैं नहीं कहता हूँ कि आप अभाव ग्रस्त जीवनयापन करें, लेकिन दूसरों को वंचित कर संसाधनों का स्वार्थपूर्वक उपयोग करने का अन्याय न करें।

माना कि बढ़ती जनसंख्या का दबाव जल, बिजली, वाहन, मकान आदि की खपत बढ़ा रहा है, लेकिन क्या छोटी–छोटी चीजों व क्रियाकलापों को साझा करने से इन्हें पार नहीं कर सकते? अवश्य कर किया जा सकता है, सत्य तो यह है कि करना ही पड़ेगा।

अन्यथा लेख पढ़ते–पढ़ाते स्वयं को ही स्वाहा कर बैठेगें। विकल्प तलाशने होंगे, अक्षय ऊर्जा/सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल ऊर्जा, कृषि व पशुपालन आदि सब संवारने होंगे। वन–वनस्पति, प्रकृति सबको अपने जीवन का हिस्सा बनाना होगा। लकड़ी, कागज, पेड़ आदि सब बचाना होगा, कार्बन उत्सर्जन का नियंत्रण करते हुए वैज्ञानिक तकनीकी का भी सहयोग लेते हुए इस कार्बन उत्सर्जन की खपत की क्षमता बढ़ाने के लिए भी वन–वनस्पति को बढ़ाना होगा। हरित क्षेत्र बढ़ाना होगा। फलदार वृक्ष बोकर कृषि को उन्नत बनाना होगा। विवेकशील होकर जनसंख्या पर भी नियंत्रण पाना होगा। प्रकृति एंव धरती माता को बचाना है।

विज्ञान की सार्थकता भी तभी है जब हम इसे लोगों से जोड़ सकते हों। चाहे वह स्वास्थ्य का क्षेत्र हों, कृषि का क्षेत्र हो, उद्योग का क्षेत्र हों या फिर शिक्षा का क्षेत्र। सभी क्षेत्रों द्वारा पारिस्थितिकी तंत्र का बचाने एवं संरक्षण की योजना अवश्य शामिल हो अन्यथा विज्ञान का डंका बजाना भी व्यर्थ पर्याय ही बन जाएगा।

इन सब उपायों को लिए आधार हो – पारस्परिक समभाव, आपसी मेल–जोल, अपने कौशल एवं विचारों का आदान–प्रदान, तकनीकी तथा संसाधनों को साझा करना, परहित के लिए त्याग व सम्मान, अपने से छोटों को स्नेह के साथ लेकर आगे बढ़ना इत्यादि तभी हम दुनिया का मन बदल सकते। सोच बदल सकते हैं। तभी हम मानव/मनुष्य कहलाने की स्थिति में खडे हो सकते हैं और परमपिता परमात्मा को उसके दिए हुए का धन्यावाद कह सकते हैं।

वर्तमान में जिस तरह की परिस्थितियां महानगरों के आस–पास बनी हैं उससे निजात पाने के लिए आपसे आग्रह है कि अब समय आ गया है – अपने आप को सचेत करने का, अपने आप को तथा दुनिया को जगाने का है।

अतः निम्न पंक्तियों को दोहराकर अपनी कलम को विराम देता हूं :–

उठो–उठो, उठो प्रबुद्ध भारती,
गगन तम्हें पुकारता।
धरा तुम्हें दुलारती।।
उठो प्रबद्ध भारती।
उठो प्रबद्ध भारती।।

अद्यतन सूचनाओं एवं ज्ञान का स्रोत ''पुस्तकालय''

प्राची देशपांडे
प्रलेखन अधिकारी, रा.प्र.सं.

आज का पुस्तकालय संचित पुस्तकों का मात्र कोषगृह ही नहीं – बल्कि सामाजिक जीवन के साथ हर संभव संबंध स्थापित करने वाला बहुसूत्रीय संस्थान है। भारत में अकादमिक मंचों पर प्रायः यह चिंता और चर्चा की जाती है कि नई तकनीक पुस्तकालयों को एकदम अप्रासंगिक कर देगी। वैसे तो पुस्तकों पर मंडराने वाले खतरों की चर्चा इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों के आगमन के साथ ही शुरू हो गई थी, क्योंकि इन माध्यमों ने पुस्तकों के अस्तित्व को कई तरह से चुनौती दी है। दुनिया का बहुत सारा ज्ञान इण्टरनेट पर आ गया। इसने तो भारी भरकम किताब और उसके विशाल संग्रहों यानी पुस्तकालयों को बेगानी सिद्ध करने में कोई कसर ही नहीं छोडी। व्यावहारिक लोग कहते हैं, किताब और लाइब्रेरी खत्म भी हो जाए तो क्या हर्ज है, और पुस्तक प्रेमी इस कल्पना पर ही मुंह लटका लेते हैं। अतीत का मोह कम प्रबल नहीं होता।

आज भारत की कई विश्वविद्यालय लाइब्रेरी इण्टरनेट की सुविधा को पूर्ण रूप से अपना रही है। सूचनाओं के विस्फोट के इस दौर में सही सूचना पाठकों तक पहुँचाने में आज सबसे बड़ी चुनौती यही है। आधुनिक युग के पुस्तकालय विज्ञान एक विकसित विज्ञान के रूप में मान्यता प्राप्त कर चुका है आज पुस्तकालय विज्ञान के लिए सूचना विज्ञान शब्द का प्रयोग हो रहा है, क्योंकि आज का युग सूचनाओं का युग है जो देश विकसित है उसके विकास का कारण नई सूचनाओं से अवगत होना है। ग्रन्थालय एक ऐसा स्थान है जहाँ पर सूचनाओं को एकत्रित तथा संमिलित किया जाता है तथा उन्हें पाठकों के लिए उपयोगी बनाया जाता है। अकादमिक और अनुसंधान प्रचार व प्रसार के लिए पुस्तकालय से अच्छा कोई साधन नहीं है।

तकनीकी युग में रा.प्र.सं. पुस्तकालय का महत्व।

सूचनाओं के विस्फोट के इस दौर में प्रसार व प्रचार के रूप में प्रलेखन अधिकारी एंव पुस्तकालय तकनीकी अधिकारी की भूमिका और अधिक बढ़ गई है, क्योंकि पुस्तकालय में कम्प्यूटर के आगमन से तो सब कुछ बदल गया है रा.प्र.सं. पुस्तकालय ने अपनी प्रचार व प्रसार सेवाओं को कम्प्यूटर व इन्टरनेट से अच्छी तरह से कम समय में प्रदान कर अपनी वेबसाइट की लिंक खोलकर अपना पूरा विवरण देश में ही नहीं बल्कि संसार में कुछ समय में उपलब्ध कराया है। ऑन–लाईन पब्लिक एक्सैस केटलॉग से अपनी पुस्तकों, पत्र पत्रिकाओं एवं अन्य सामग्री की जानकारी भी पाठकों को कुछ ही क्षणों में उपलब्ध कराया जा सकती है। अपने प्रकाशन को भी शीघ्रता से आनॅलाईन

कराया जा सकता हैं, इस तरह से इंटरनेट ने पुस्तकालय का पूरा स्वरूप ही बदल दिया है। रा.प्र.सं. में अनुसंधान संबंधी गतिविधियों को एक आधुनिक ज्ञान संसाधन केंद्र द्वारा नियंत्रण किया गया है, जिसमें प्रासंगिक पुस्तकों और पत्रिकाओं का एक विशाल संग्रह, बड़ी संख्या में डेटाबेस और वर्तमान प्रोटोकॉल के ऑन–लाइन सदस्यता और एक सूचना केंद्र है। रा.प्र.सं. पुस्तकालय बहुत से कंप्यूटर प्रसांगिक सेवाओं जैसे कि वर्तमान जागरूकता सेवाएं सूचना का चयन, अंतर–पुस्तकालय ऋण सुविधा, पारंपरिक पुस्तकालय की सामान्य सेवाएं इत्यादि प्रदान करती है।

ऐसी पुस्तकालय को देखकर लगता है कि कम्प्यूटर और इन्टरनेट, पुस्तकालय के शत्रु नहीं ब्लकि उसके सहायक है, इन्होंने तो पुस्तकालय सेवा का विस्तार ही किया है। इनके माध्यम से ज्ञान के विशाल भण्डार से अपने पसंद की चीज ढूँढना बेहद आसान हो गया है। इण्टरनेट ने अनेक पुस्तकालयों की दूरी भी समाप्त कर दी है।

रा.प्र.सं. पुस्तकालय और प्रलेखन सेवा संस्थान के वैज्ञानिकों, छात्रों, परियोजना कर्मचारियों और पशुओं द्वारा आवश्यक सभी मुद्रित और इलेक्ट्रॉनिक वैज्ञानिक सहित्यों को प्राप्त करने, एकत्र करने, प्रस्करण, भंण्डार और वितरण के लिए जिम्मेदार हैं। सहायता सेवा इकाई के रूप में, पुस्तकालय एक गतिशील ई–सूचना वातावरण बनाने का प्रयास कर रहा है, जिससे शोध, शिक्षा और नवीनता को बढ़ावा मिलता है।

पुस्तकालय के प्रमुख लक्ष्य है :–

''सूचना संसाधनों पर समय से पहुँचने के लिए डिजिटल सामग्री प्रबंधन पर उच्च गुणवत्ता वाले उपकरण संग्रह का विकास, रखरखाव और सेवाएं प्रदान करना, अनुसंधान और शिक्षा का समर्थन करते हैं।''

देश व दुनिया में, पुस्तकालय, के प्रलेखन अधिकारी एवं पुस्तकालय तकनीकी अधिकारी दोनों की भूमिका पहले से अधिक महत्वपूर्ण हो गई है। बदलती परिस्थितियों के साथ परिवर्तन, सुधार एंव विस्तार करते रहना, यह आधुनिक पुस्तकालय की महत्वपूर्ण जरूरत है। इसके लिए हमने पुस्तकालयों को नई डिजिटल तकनीक से जोड़ने का प्रयास किया है।

अनुसंधान उत्पाद का संरक्षण एवं ऑनलाइन संस्थागत भंडार

रा.प्र.सं. पुस्तकालय ने लंबे समय तक डिजिटल संरक्षण प्रयोजनों के लिए अपने संस्थान के शोध उत्पादन को एकत्रित, संग्रह और संरक्षित करने के लिए ''संस्थागत भंडार'' स्थापित किया है, जो इम्यूनोलॉजी प्रतिरक्षा और जीवन विज्ञान के क्षेत्र में एकीकृत अनुसंधान और उन्नत शोध संचार नेटवर्क को मजबूत करेगा।

प्रलेखन अधिकारी पुस्तकालय विज्ञान एक विशेषज्ञ होता है, इस कारण पुस्तकालय में विविध कार्यो के लिए क्या नीतियाँ होनी चाहिए, इसमें समिति के सदस्यों की सहायता करता है, समिति द्वारा पुस्तकालयाध्यक्ष के सहयोग से बजट तैयार किया जाता है। प्राधिकारी के साथ विचार–विमर्श कर उसकी स्वीकृति प्राप्त करता है, पुस्तकालय से सम्बन्धित समस्त नीतियों और विषयों को लागू करना और कार्यों पर नियन्त्रण रखना उसका कार्य है। पुस्तकालय अध्ययन/अध्यापन एवं शोध कार्यों के लिए अधिकाधिक उपयोगी और सहायक सिद्ध करने हेतु प्रलेखन अधिकारी और शिक्षक वर्ग में निकटता का सम्बन्ध होना आवश्यक है। तभी तो शिक्षकों के माध्यम से ज्यादा से ज्यादा छात्र लाभान्वित हो सकेगें। शिक्षकों के माध्यम से प्रलेखन अधिकारी से सम्बन्ध स्थापित हो सकेगा और अधिक से अधिक जानकारी उपलब्ध हो सकेगी, शोध कार्यों में मदद मिलेगी जिससे शिक्षा का प्रचार–प्रसार बढ़ेगा, इस प्रकार प्रलेखन अधिकारी एवं समिति के बीच एक कड़ी का कार्य करता है। इसका दोनों के प्रति पूर्ण उत्तरदायित्व है दोनों ही कार्यो में प्रलेखन अधिकारी की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

अंत में उपयुक्त तथ्यों पर नजर रखते हुए, हम यह कह सकते हैं कि कम्प्यूटर ने ग्रन्थालयों का पूरा स्वरूप बदल दिया जिसके परिणामस्वरूप प्रलेखन अधिकारी एवं पुस्तकालय तकनीकी अधिकारी दोनों की भूमिका कर्तव्य व दायित्व और भी अधिक बढ़ गए है। रा.प्र.सं. पुस्तकालय ने नई तकनीक को अपनाने की तथा सर्वोत्तम सेवाएं प्रदान करने के लिए अपने स्तर पर सर्वश्रेष्ठ कोशिश की हैं।

हिंदी की संवैधानिक स्थिति

रनबीर सिंह
सहायक निदेशक (रा.भा.)

स्वतंत्रता आंदोलन से लेकर आज तक हिंदी ने अनेक महत्त्वपूर्ण पड़ाव पार किए हैं। हिंदी को भारतीय चिंतन और संस्कृति का वाहक माना गया है। यह हमारे पारंपरिक ज्ञान, प्राचीन सभ्यता और आधुनिक प्रगति के बीच एक कड़ी भी हैं। हिंदी जन–आंदोलनों की भाषा रही है। आचार्य निनोबा भावे ने अपने ऐतिहासिक भू–दान आंदोलन की सफलता का श्रेय हिंदी को दिया था। महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता संग्राम को जन–आंदोलन बनाया था, जिसमें हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं का बहुमूल्य स्थान था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत भारत के संविधान निर्माताओं ने 14 सितम्बर, 1949 को हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया था। इसलिए प्रत्येक वर्ष इस दिन को हिंदी दिवस के रूप में मनाया जाता हैं। देश की राजभाषा नीति का स्वरूप संविधान के मूलभूत सिद्धांतों के अनुसार संघीय, लोकतांत्रिक, संतुलित, समावेशीय और भाषा–निरपेक्ष है। संविधान में राजभाषा के संबंध में धारा 343 से 351 तक व्यवस्था कि गई है। भारतीय संविधान की धारा 343 (1) के अनुसार संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी। संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंको का रूप भारतीय अंको का अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा। राजभाषा अधिनियम 1963 के अनुसार संसद और राज्यों की विधान सभा की सभी कार्रवाईयों की भाषा हिंदी तथा प्रादेषिक भाषाएं होंगी और उनका अंग्रेजी में अनुवाद देना होगा। अधिनियम के अनुसार संकल्प, साधारण आदेश, नियम, अधिसूचनाएं प्रशासनिक या अन्य प्रतिवेदन, प्रेस विज्ञप्तियों जैसे दस्तावेजों में अंग्रेजी के साथ–साथ हिंदी का प्रयोग अनिवार्य है।

राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 8 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग कर भारत सरकार ने राजभाषा नियम 1976 बनाया। इसके अंतर्गत हिंदी में प्राप्त पत्रादि के उत्तर हिंदी में देने होंगे। धारा 3 (3) के अधीन दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी को यह सुनिश्चित करना होगा कि यह दस्तावेज अनिवार्य रूप से हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी हो। नियम 11 के अनुसार सभी साइन बोर्ड, नामपट्ट, सूचना पट्ट, रबड़ की मोहरें, परिचय–पत्र, लेखन –सामग्री, पत्र शीर्ष लिफाफों पर उत्कीर्ण लेख हिंदी और अंग्रेजी में लिखी जाएंगी।

भाषा की दृष्टि से पूरे देश को ''क'', ''ख'', ''ग'' तीन क्षेत्रों

में बांटा गया है। ''क'' क्षेत्र में उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान एवं अंडमान व निकोबार द्वीप समूह आते हैं जबकि ''ख'' क्षेत्र मे गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब और चंडीगढ़ तथा ''ग'' क्षेत्र में ''क'' और ''ख'' में उल्लेखित राज्यों को छोड़कर अन्य सभी राज्य आते हैं। हिंदी का व्यापक प्रयोग सुनिश्चित करने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी उपकरण जैसे लीला' 'श्रुतलेखन' मंत्र' तथा ई–महाशब्द कोष के विकास के लिए पर्याप्त वित्तीय संसाधन आबंटित किया गया हैं। महर्षि दयानंद सरस्वती के शब्दों में कहा जा सकता है कि हिंदी के द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।

भारत एक सौ बाईस भाषाओं और सोलह सौ बोलियों वाला एक विशाल देश है। मेरा मानना है कि इस देश में हमारा लोकतंत्र तभी फल–फूल सकता है जब हम अपनी बात जनता तक उसकी भाषा में पहुंचाएं। भारत की सभी भाषाएं इसके लिए सक्षम हैं। इन सभी भाषाओं के बीच हिंदी एक संपर्क भाषा है। हमारा यह प्रयास होना चाहिए कि हिंदी का प्रयोग ज्ञान–विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में भी बढ़े ताकि देश की प्रगति में ग्रामीण जनता सहित सभी की भागीदारी सुनिश्चित हो सके। इसके लिए यह भी जरूरी है कि तकनीकी ज्ञान के साहित्य का सरल अनुवाद हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में उपलब्ध हो। हमारे कार्यालयों में संचार एंव प्रौद्योगिकी में हिंदी का प्रयोग बढ़ रहा है।

विश्व में तेजी से बदलते आर्थिक तथा वित्तीय परिवेश में आज हिंदी की अपनी एक अलग छाप है। दुनिया भर के देशों में रह रहे भारतीय मूल के करोडों प्रवासी संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग कर रहे हैं। इससे हिंदी को अंतराष्ट्रीय स्तर को नई पहचान मिली है। हर साल आयोजित प्रवासी भारतीय दिवस इस दिशा में अहम भूमिका निभाई जा रही है। इस तरह के आयोजनों से हिंदी के विस्तार को और अधिक बढ़ावा मिलेगा।

आज संयुक्त राष्ट्र जैसी संस्थाओं में भी हिंदी की गूंज सुनाई देने लगी है। हमारे प्रधानमंत्री द्वारा संयुक्त राष्ट्र महासभा में हिंदी में दिए गए अभिभाषण के बाद ही संयुक्त राष्ट्र संघ ने इक्कीस जून को 'अंतराष्ट्रीय योग दिवस घोषित करने का ऐतिहासिक निर्णय लिया था। यह इस बात का प्रतीक है कि विश्व मंच पर भारत का महत्त्व बढ़ा है। मुझे विश्वास है कि हम सबके प्रयासों से हिंदी को शीघ्र ही संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा का दर्जा भी प्राप्त हो सकेगा।

विश्व के सभी प्रमुख विकसित और विकासशील देश अपनी–अपनी भाषाओं में ही अपना सरकारी कामकाज करके समृद्ध और उन्नत हुए हैं। अशिक्षा, बेरोज़गारी और गरीबी से उबरने के लिए आम जनता को प्रतिरक्षाविज्ञान, विज्ञान, सूचना प्रौद्योगिकी, पर्यावरण संरक्षण, कृषि, इंजीनियरी, स्वास्थ्य सेवाओं जैसे अनेक क्षेत्रों में राजभाषा हिंदी के माध्यम से

शिक्षित करने की अहम आवश्यकता है। इन क्षेत्रों में हिंदी में मौलिक लेखन को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार ने समय–समय पर पुरस्कार योजनाएं लागू की हैं। लेखक और प्रकाशक आधुनिक ज्ञान को सभी भारतीयों तक पहुंचाने में और भारत को एक महान एवं शक्तिशाली राष्ट्र बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

सरकारी कार्यालयों में हिंदी का अधिकाधिक उपयोग सुनिश्चित करने हेतु भारत सरकार के राजभाषा विभाग द्वारा उठाए गए कदमों के परिणामस्वरूप कंम्प्यूटर पर हिंदी में कार्य करना अधिक आसान एवं सुविधाजनक हो गया है। राजभाषा विभाग द्वारा वेब आधारित सूचना प्रबंधन प्रणाली विकसित की गई है जिससे भारत सरकार के सभी कार्यालयों में हिंदी के उत्तरोत्तर प्रयोग से संबंधित तिमाही प्रगति रिपोर्ट तथा अन्य रिपोर्टें राजभाषा विभाग को त्वरित गति से भिजवाना आसान हो गया है। सरकारी कामकाज अधिक से अधिक हिंदी में करने के लिए यह भी आवश्यक है कि भाषा को सरल एवं सहज बनाया जाए ताकि यह सभी के लिए बोधगम्य हो तथा इसका प्रयोग बहु–आयामी हो सके। राजभाषा का मुख्य उद्देश्य जनता का काम जनता की भाषा में संपन्न होना है। प्रशासन की भाषा एक अलग तरह की भाषा होती है जो सीधे–सीधे अपने विषय पर बात करती है। उसमें साहित्यिक या क्लिष्ट भाषा शैली के लिए कोई स्थान नहीं होता। अतः सरल हिंदी का प्रयोग करते हुए हम राजभाषा के प्रयोग को बढ़ावा दे सकते हैं। हिंदी एक ध्वन्यात्मक भाषा है, जहाँ अंग्रेजी के उच्चारण के लिए भी शब्दकोश देखने की आवश्यकता पड़ती है वहीं हिंदी के लिए सिर्फ अर्थ देखने के लिए ही शब्दकोश की आवश्यकता पड़ती है। अंग्रेजी शब्दों की स्पेलिंग रटनी पड़ती है, जबकि हिंदी के शब्दों की वर्णमाला– स्वर व व्यंजन तथा बारह खड़ी को रटने से हिंदी के किसी भी शब्द को पढ़ना लिखना सहज हो जाता है। यही कारण है कि हिंदी में किसी भी भाषा को लिखना या उसका उच्चारण करना सरल होता है। इस तथ्य की पुष्टि इस बात से भी होती है कि माक्रोसॉफ्ट के मालिक बिलगेट्स ने हिंदी भाषा और लिपि को विश्व की अन्य भाषाओं की तुलना में सबसे अधिक वैज्ञानिक माना है।

राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान में सरकारी काम–काज में हिंदी के प्रगामी प्रयोग के क्षेत्र में प्रगति हुई है, किंतु अब भी लक्ष्य प्राप्त नहीं किए जा सके हैं। अभी भी बहुत सा काम अंग्रेजी में हो रहा है। राजभाषा विभाग का लक्ष्य है कि सरकारी कामकाज में मूल टिप्पण और प्रारूपण के लिए हिंदी का ही प्रयोग हो। यही संविधान की मूल भावना के अनुरूप भी होगा। आज भी सरकारी कार्यालयों में राजभाषा हिंदी का कार्य अनुवाद के सहारे चल रहा है। संघ की राजभाषा नीति प्रेरणा, प्रोत्साहन और सद्भावना पर आधारित है इसके अंतर्गत हिंदी में उत्कृष्ट कार्य के लिए प्रतिवर्ष और क्षेत्रीय स्तर के पुरस्कार प्रदान किए जाते है।

खुशी का रासायनिक आधार

डॉ. अगम प्रसाद सिंह
स्टाफ वैज्ञानिक, रा.प्र.सं.

''कभी खुशी कभी गम'' यह हम सबने सुना है। एक ही व्यक्ति विभिन्न परिस्थिति में खुश या दुखी हो सकता है। हमारा मस्तिष्क इसे किस प्रकार से ग्रहण और उसकी प्रतिक्रिया करता है। किस तरह की रासायनिक प्रतिक्रियाएं मस्तिष्क के अंदर घटित होती हैं और कौन सा रसायन ऐसा बदलाव लाने में सक्षम हैं, यह विचार बहुत से लोगो के मन में आता होगा। आइये इसके बारे में जानते हैं।

वैज्ञानिकों के लिए भी मन की गहराईओं को समझ पाना आसान नहीं है। खासकर जबकि कोई व्यक्ति विपरीत परिस्थिति में भी किस प्रकार से खुश रह लेता है। कुछ ऐसे भी उदाहरण देखने को मिलते हैं जहाँ व्यक्ति को महसूस होता है की उसके दुःख का कोई अंत ही नहीं होता। वैज्ञानिक इसे समझने के लिए सतत प्रयास कर रहे हैं। अमेरिका के येल विश्वविद्यालय के तंत्रिका वैज्ञानिकों ने जब बंदरों और चिमपैन्जी के मस्तिष्क का मानव मस्तिष्क के साथ तुलनात्मक अध्ययन किया तो यह पाया की उनमें बहुत सी समानताएं हैं यद्यपि कि उनके मस्तिष्क के आकार में असमानता होती है तथा बंदर और चिमपैन्जी का दिमाग मानव की तुलना में छोटा होता है। परन्तु दोनों में महत्वपूर्ण अंतर यह है कि मानव मस्तिष्क की प्रक्रमण (प्रोसेसिंग) क्षमता अन्य प्राइमेट्स (बंदर प्रजाति) से ज्यादा होती है जिससे मानव जटिल प्रक्रियाओं का आसानी से समाधान ढूंढ लेता है। बंदर और चिमपैन्जी के दिमाग की तुलना में मानव मस्तिष्क में कहीं अत्यधिक जटिल तह और हिस्से में पाए जाते है अगर कोशिका स्तर पर देखा जाये तो कोशिकाओं का आपसी संपर्क और कार्य प्रणाली में भी बन्दर और मानव मस्तिष्क में काफी अंतर पाया गया है। कुछ इन्हीं आधारों पर मानव अन्य जीवों से अधिक बुद्धिमान तथा कार्य कुशल होता है। येल विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक आंद्रे ने

जब दिमाग के 16 हिस्सों का तुलनात्मक अध्ययन किया तो पाया की मानव मस्तिष्क में जो हिस्सा सबसे अलग होता है वह है निओकार्टेक्स। मस्तिष्क के इसी भाग में डोपामीन नामक रसायन की उत्पत्ति होती है। बंदर और चिमपैन्जी का दिमाग हमारी तरह डोपामीन नहीं बनाते हैं।

डोपामीन न्यूरॉन्स द्वारा उत्सर्जित एक न्यूरोट्रांसमिटर है। यह रसायन ''पुरस्कार–प्रेरित व्यवहार'' को नियंत्रित करने में अहम भूमिका निभाता है। बहुत सी ''लत लगाने वाली दवाएं'' मस्तिष्क में डोपामीन की मात्रा बढ़ाती है। ''मुख्य तंत्रिका तंत्र'' से बाहर डोपामीन एक स्थानीय केमिकल मैसेंजर का काम करता है।

डोपामीन मानव के कई प्रकार के कार्मों में सहायक होता है उनमें से मुख्य है हमारी याद करने की और सीखने की क्षमता। डोपामीन मानव शरीर की गति को भी नियंत्रित करने में हमारी सहायता करता है। डोपामीन का सबसे महत्वपूर्ण योगदान है की यह हमारे दिमाग को खुशी का एहसास देता है। डोपामीन से सम्बंधित खोज मानव मस्तिष्क के क्रियाकलाप को समझने की दिशा में बड़ी प्रगति है। अब तक की खोज के आधार पर हम पूर्ण रूप से यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकते की खुशी का एकमात्र कारण डोपामीन ही है अन्य कारणों की खोज अभी बाकी है। डोपामीन कई तरह की भूमिकाएं एक साथ निभाता है जिसका अर्थ यह निकाला जा सकता है कि जिसे हम खुशी मानते हैं वह वास्तव में हमारे शरीर की गति नियंत्रण, सीखने की क्षमता और बौद्धिक क्षमता से जुड़ा है। हम अलग–अलग भले ही समझ रहे हैं परंतु मानव विकास के क्रम में ये सारी क्षमताएं एक साथ उपयोग होता है और डोपामीन का स्राव इसी की पराकाष्ठा है।

मध्य मस्तिष्क के ''सब्स्टेंसीअ निआग्रा'' क्षेत्र के डोपामीन उत्पन्न करने वाले न्यूरॉन्स के क्षरण से पार्किसन्स नामक बीमारी होती है जिसमें याददाश्त कमजोर हो जाती है। इस रोग में शरीर के अंग का नियंत्रण ठीक से नहीं हो पाता और प्रभावित अंग कांपने लगते है। डोपामीन के खोज ने जहाँ कुछ प्रश्नों के दिए हैं साथ ही साथ कई सवाल भी उठाये हैं जिनमें प्रमुख प्रश्न यह है कि एक सामान्य एवं व्यक्ति के लिए डोपामीन की उचित मात्रा क्या होना चाहिये । कितना डोपामीन हमें खुश रखेगा तथा इसका स्तर (लेवल) कितना कम होने पर हमारी खुशियां छूमंतर हो जाएंगी।

विटामिन बी-12 की कमी और अस्थि स्वास्थ्य

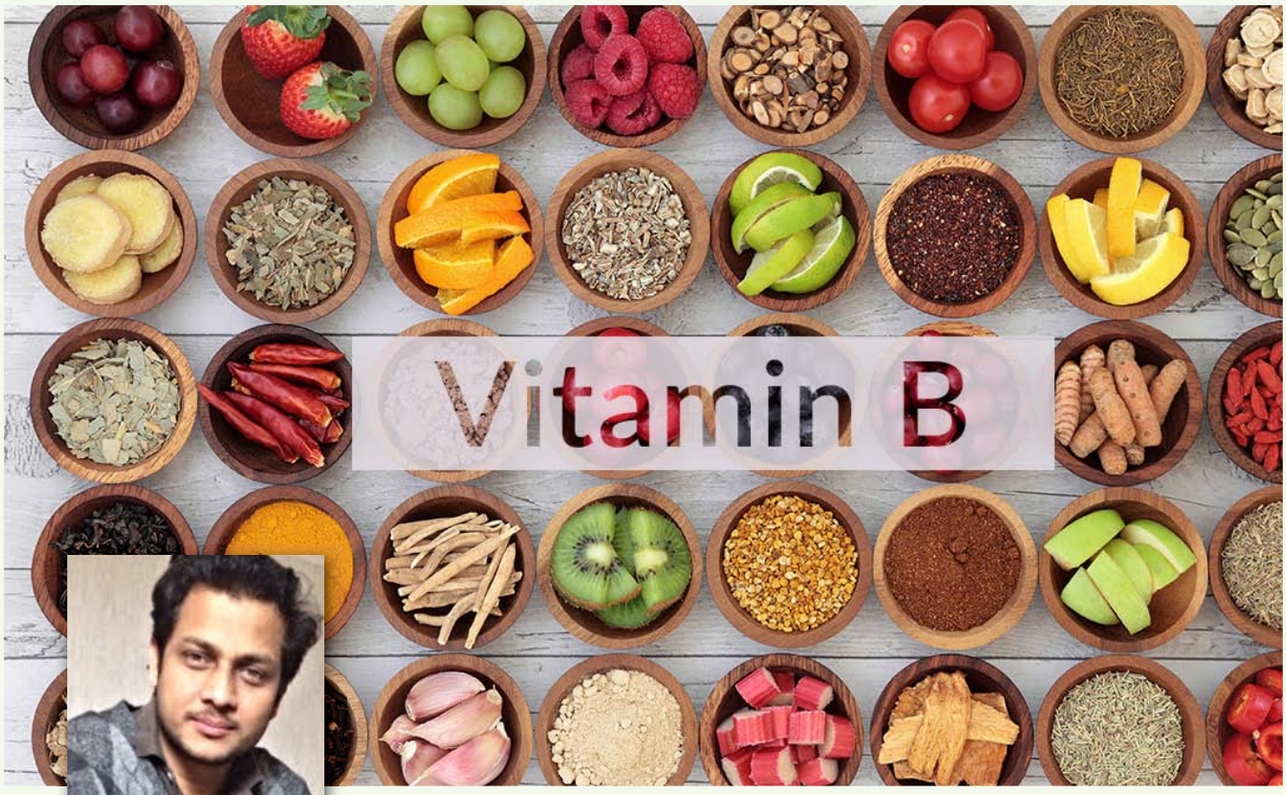

डॉ विजय कुमार यादव
स्टाफ वैज्ञानिक, रा.प्र.सं.

हड्डियां हमारे शरीर की सबसे बड़ी अंग प्रणाली में से एक हैं। वे कई महत्वपूर्ण कार्य करती हैं जिनमें नरम अंगों की सुरक्षा, हेमटपोईजिस को बहाल करना, और पुरूष प्रजनन को विनियमित करना शामिल है। इन कार्यों को ठीक प्रकार से करने के लिए हड्डियों को रीमोडलिंग की प्रक्रिया के माध्यम से निरंतर नवीनीकृत किया जाता है। अस्थि रीमोडलिंग प्रक्रिया में दो भाग होते है, निर्माण और पुनः शोषण। अस्थि का निर्माण ओस्टियोबॉल्स्ट द्वारा किया जाता है, जबकि अस्थि का पुनः शोषण ओस्टियोक्लास्ट द्वारा किया जाता है। ये दोनों प्रक्रियाएं यह सुनिश्चित करती हैं कि वयस्क मनुष्य के अधिकांश जीवन काल में उसके पास एक मजबूत और लचीला कंकाल रहता है। इन प्रक्रियाओं के असंतुलन से अस्थि रोग होते हैं जैसे कि, ऑस्टियोपोरोसिस, ऑस्टियोआर्थराइटिस, ओस्टिसक्लेरोसिस इत्यादि। इस अनुच्छेद में, मैं आपको ऑस्टियोपोरोसिस के बारे में बताऊंगा जो कि एक दुर्बल रोग है जिसे अक्सर मूक रोग के रूप में भी जाना जाता है। मूक रोग इसलिये कहते हैं क्योंकि जब तक कि आप अपनी हड्डी को तोड़ नहीं लेंगे, तब तक आप यह नहीं जानते कि आपको ऑस्टियोपोरोसिय रोग है या नहीं। ऑस्टियोपोरोसिस एक कम हड्डी की बडी बीमारी है जो भारत में लाखों लोगों को प्रभावित करती है। हमारे देश की मेडिकल स्वास्थ्य प्रणाली तथा हमारी जागरूकता अभी इतनी उन्नत नहीं है जितनी कि बाहर के देशों में है। इस वजह से हम अपनी हड्डियों की स्वास्थ्य की जांच बहुत कम करते है। कई बार तो जब तक कि हम फ्रैक्चर का सामना नहीं करते हैं, हम अस्पताल जाने की सोंचते भी नहीं हैं।

अस्थि स्वास्थ्य विभिन्न कारकों पर निर्भर करती है। इसमें कुछ कारक ऐसे शामिल हैं जो हम आसानी से बदल सकते हैं, उनमें निम्न शामिल हैं – एक उचित संतुलित आहार हड्डियों का स्वास्थ्य अच्छा रखने का एक महत्वपूर्ण पहलू है जिसमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा और सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलन शामिल है। सूक्ष्म पोषक तत्वों में हड्डियों के स्वास्थ्य का एक

महत्वपूर्ण पहलू शामिल होता है जिनमें विटामिन और खनिज शामिल होते हैं। पिछले दशक में कई विटामिनों का पता चला है, जो हड्डियों के स्वास्थ्य को और बढ़ती है। विटामिन 12बी एक पानी में घुलनशील विटामिन है जो पशु आधारित आहार अर्थात मांस या पोल्ट्री से प्राप्त किया जा सकता है। मैं इस बात पर वापस आऊंगा कि यह केवल एक पशु आधारित आहार से ही क्यों प्राप्त किया जा सकता है, न कि पौधे आधारित आहार से । पिछली सदी के शुरूआती भाग में किए गए एक बहुत ही आश्चर्यजनक प्रयोग के माध्यम से यह पाया गया कि परनीशियस अनीमिया नाम की बीमारी विटामिन बी 12 के कम हो जाने के कारण होती है।

परनीशियस अनीमिया एक ऐसी बीमारी है जिसमें रोगी के शरीर में लाल रक्त कोशिकाएं कम संख्या में होती हैं। इस बीमारी से रोगी की मौत सुनिश्चित होती है। जॉर्ज होयत व्हेपल नाम के एक वैज्ञानिक ने मनीमिक कुत्तों पर विभिन्न आहारों के प्रभाव का परीक्षण किया और दिखाया कि जब उन्होंने इन एनीमिक कुत्तों को पशु उत्पादों को विशेष रूप से जिगर खिलाया तो एनीमिक कुत्तों की लाल रक्त कोशिकाएं वापस सामान्य स्तर पर वापस आ गयी। एनीमिक कुत्तों में हुई इस खोज से प्रभावित होकर दो चिकित्सा को डॉ. जॉर्ज रिचर्ड्स मिनोट और विलियम पैरी मर्फी ने एक कट्टरपंथी अवधारणा का परीक्षण मनीमिया रोगियों पर किया। इस प्रयोग में उन्होंने एनीमिया रोगियों को कच्चे जिगर को खिलाया, यह देखने के लिए कि एनमिक कुत्तों में जो प्रयोग देखा गया था, वह मनुष्यों के साथ भी लागू होता है। सन् 1923 में किए गए इस कट्टरपंथी प्रयोग से हर कोई आश्चर्य चकित रह गया। कच्चे जिगर को खाने से एनीमिक रोगियों का एनीमिया ठीक हो गया। ये रोगी जो कुछ महीने पहले तक चल फिर नहीं सकते थे, अब दौड़ सकते थे। यह एक बड़ा चिकित्सा विवाद का केंद्र–बिंदु बन गया जो बाद के वर्षों में सुलझा लिया। आज हम ये जानते हैं कि वास्तव में यकृत में एक अणु है जो इस एनीमिया को उलट देता है। इस खोज के लिये व्हाइपल, मिनोट और मर्फी को सन 1934 में मेडिसिन में नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। इसके करीब बीस साल बाद लीवर के अणु को शुद्ध किया गया और विटामिन बी 12 का नाम दिया गया। इस अणु की संरचना को डोरोथी हॉजकिंस नामक वैज्ञानिक द्वारा स्पष्ट किया गया और उन्हें इस काम के लिए नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। बाद में इसे सफलतापूर्वक साबित किया गया कि विटामिन बी 12 ही परनीशियस एनीमिया के लिए जिम्मेदार है, क्योंकि एनीमिया को सामान्य करने में इस विटामिन के इंजेक्शन की सफलता जिगर रवाने की ही तरह ही पायी गयी।

आप अब यह पूछेंगे कि इंसान के पास भी तो जिगर हैं, फिर हम विटामिन बी 12 को स्वयं अपने शरीर में क्यों संश्लेषित नहीं कर सकते? तथ्य यह है कि विटामिन बी 12 केवल जिगर में संग्रहीत किया जाता है संश्लेषित नहीं। पशुओं में केवल कुछ बैक्टीरिया में विटामिन बी 12 का संश्लेषण करने की क्षमता होती है। इस कारण केवल वो जानवर विटामिन बी 12 पर आत्मनिर्भर होते हैं जो विटामिन बी 12 संश्लेषण समर्थ बैक्टीरिया को अपनी जठरांत्रिय प्रणाली में सही स्थान

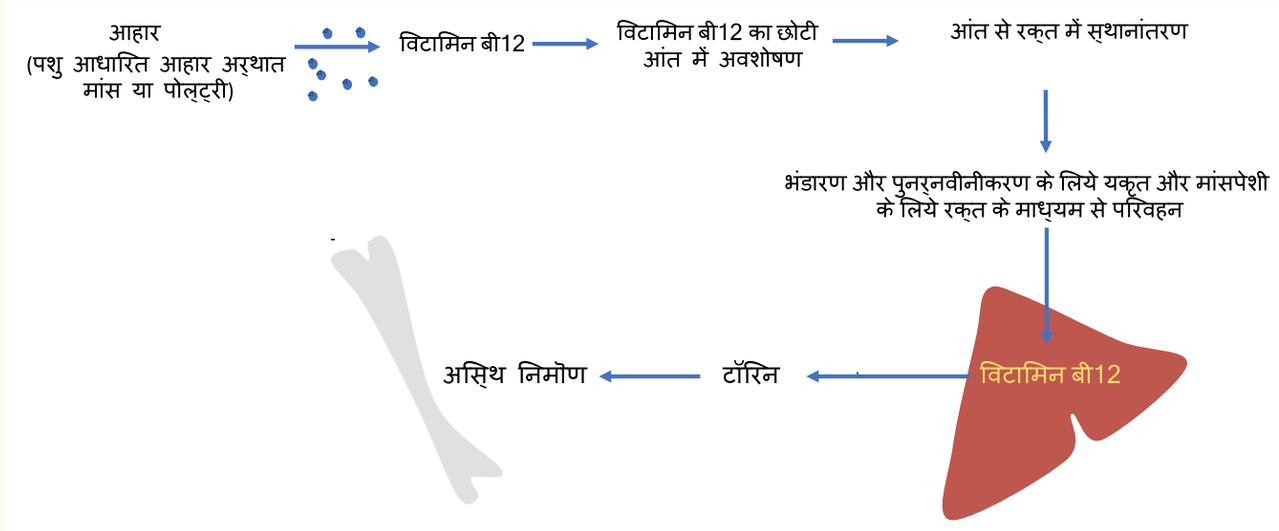

आकृति १: विटामिन बी12 और अस्थि निमोण

पर विकसित कर सकते हैं। यह सही स्थान जठरांत्रिय प्रणाली में पेट से पहले है, क्योंकि विटामिन बी 12 को छोटी आंत में अवशोषित किया जाता है। कुछ जानवरों की प्रजातियों जैसे जुगाली करने वाले जंतु पेट से पहले इन बैक्टीरिया को घर देते हैं, और इसलिए जंतु विटामिन बी 12 को छोटी आंत में अवशोषित कर सकते हैं। विटामिन बी 12 आत्मनिर्भर होते हैं। अवशोषित होने के बाद विटामिन बी 12 को रक्त संचार प्रणाली द्वारा विभिन्न अंगों में बांट दिया जाता है। जंहा उसे या तो संग्रह या फिर उपयोग कर लिया जाता है। विटामिन बी 12 का अधिकांश संग्रह यकृत में (95–97:) होता है और बचा हुआ (3–5:) शरीर के अन्य कोशिकाओं में संग्रह या फिर उपयोग में लाया जाता है। मनुष्य जाति अपनी आंतों में इन विटामिन बी 12 संश्लेषण सक्षम बैक्टीरिया को विकसित नहीं कर सकतें हैं और इसलिए हम विटामिन बी 12 को केवल पशु उत्पादों को खाने से प्राप्त कर सकते है। क्योंकि विटामिन बी 12 यकृत में संग्रहीत होता है इसी कारण से सन 1923 में कच्चे जिगर को खाने से रोगियों का हानिकारक एनीमिया ठीक हो गया था। इस महत्वपूर्ण विटामिन की कमी की वजह से शरीर मेंथकान, कमजोरी, त्वचा में पीलापन, हृदय रोग, ऑस्टियोपोरोसिस और याद कमजोर होने लगती है। इस लेख में हम केवल विटामिन बी 12 की कमी से होने वाली ऑस्टियोपोरोसिस के बारे में बात करेंगे।

मनुष्यों में विटामिन बी 12 की कमी हड्डियों के स्वास्थ्य को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है और ऑस्टियोपोरोसिस जैसे कम अस्थि घनत्व वाले बीमारियों को जन्म देती है। भारत जैसे देश में जहां एक बड़ी आबादी शाकाहारी की है, विटामिन बी 12 की कमी बहुत प्रचलित है। इस तथ्य के बावजूद कि विटामिन बी 12 की कमी से अस्थियों का स्वास्थ्य प्रभावित होता है और एक बड़ी भारतीय आबादी इससे त्रस्त है। कुछ साल पहले तक, हमें इस बात का कोई संकेत नहीं था कि वो कौन सी ऐसी प्रकियाएं हैं जिनके द्वारा विटामिन बी 12 अस्थियों को विनियमित करता है। यह समझने के लिए कि विटामिन बी 12 की कमी ने हड्डी के स्वास्थ्य को कैसे प्रभावित किया, डॉ विजय कुमार यादव की प्रयोगशाला ने विटामिन बी 12 की कमी के एक मूस आनुवंशिक मॉडल का निर्माण किया। इस मॉडल के विश्लेषण से पता चला कि इन विटामिन बी 12 न्यून चूहों में वृद्धि और हड्डी के दोष हैं। इन चूहों में नई हड्डी निर्माण करने वाली ऑस्टियोब्लास्ट की संख्या में गंभीर दोष पाया गया। आश्चर्यचकित करने वाली बात तो यह थी कि अस्थिपुनः शोषण कोशिकायें विटामिन बी 12 की कमी से बिल्कुल भी प्रभावित नहीं हुई थी। इस तथ्य ने कि केवल अस्थि निर्माण विटामीन बी 12 की कमी से प्रभावित किया बल्कि हमें बताया कि अगर हम इसके ऑस्टोबलास्ट संख्या के आणविक आधार को समझ सके तो हम एक नयी चिकित्सा की पहचान करने में सक्षम हो सकते हैं, जो ऑस्टियोपोरोसिस जैसी गंभीर बीमारी का इलाज कर सकती है। विस्तृत आणविक जांच से हम इस नतीजे पर पहुंचे कि विटामिन बी 12 यकृत में टॉरिन संश्लेषण को विनियमित करता है। जिगर व्युत्पन्न टॉरिन रक्त के माध्यम से हड्डियों में पहुंचता है और वहां यह ऑस्टियोब्लास्ट के प्रसार को बढ़ाने के लिए कार्य करता है। विटामिन बी 12 की कमी के कारण जिगर व्युत्पन्न टॉरिन कम हो जाता है और इस कारण ऑस्टियोब्लास्ट में कमी आती है। हमने आगे दिखाया कि विटामिन बी 12 की कमी के कारण मनुष्यों में भी टॉरिन और ऑस्टियोब्लास्ट की कमी हो जाती है। विटामिन बी 12 की कमी वाले बच्चों और पुराने रोगियों में कम टॉरिन स्तर और हड्डी निर्माण देखा गया।

संक्षेप में, इस तथ्य की पहचान कि विटामिन बी 12 यकृत टॉरिन उत्पादन के माध्यम से हड्डियों के गठन को नियंत्रित कर रहा है और ऑस्टियोपोरोसिस के इलाज के लिए नये अवसर खोले हैं। आज की तारीख में डॉ. विजय कुमार यादव की प्रयोगशाला इस बात पर शोध कर रही हैं कि क्या विटामिन बी 12 या टारिन की गोली देने से मनुष्यों में ऑस्टियोपोरोसिस को रोका जा सकता है? यह शोध डॉ. यादव की देखरेख में श्री परमिन्दर सिंह और सुश्री मधु बघेल नाम के दो छात्र कर रहे हैं। इस कार्य के सफल क्रियान्वयन में राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान के पशु गृह कर्मचारियों और डॉ. नागराजन का बहुत बड़ा योगदान है। प्रारंभिक परिणाम बहुत होनहार हैं और ऐसा लगता है कि वह दिन दूर नहीं है जब हम आत्मविश्वास से यह कह सकेंगे कि विटामिन बी 12 या टारिनकी गोली लेने से ऑस्टियोपोरोसिस रूक सकता है। इस शोध से यह भी पता चलता है कि आहार में होने वाले सूक्ष्म बदलावों से हड्डियों के स्वास्थ्य पर बहुत असर पढ़ता है और जानवरों के व्युत्पन्न उत्पादों या विटामिन बी 12 के पूरक उत्पादों की खपत हमारे कंकाल के उचित स्वास्थ्य के लिये बहुत आवश्यक है।

क्षय रोग: निदान एवं चुनौतियां

अनम अशरफ
शोध स्कालर, एसएफबीएल,
प्रयोगशाला, रा.प्र.सं.

भव्या झा
शोध स्कालर, एसएफबीएल,
प्रयोगशाला, रा.प्र.सं.

सन् 1882 में रॉबर्ट कोच ने क्षय रोग के कारक जीवाणु 'माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरक्यलोसिस' की खोज की। क्षय रोग एक वायु संचारित संक्रामक रोग है जो मुख्यतः फैफड़ों के बृहत भक्षकोशिकाओं को प्रभावित करता है। विश्व भर में क्षय रोग जनित रूग्णदर एवं मृत्युदर का एक प्रमुख कारण है। वर्ष 2016 में 66 लाख क्षय रोग के लिए मामले दर्ज किए गए।

यद्यपि एमटीबी मुख्यतः फेफडे का रोगजनक जीवाणु है, परन्तु यह प्रणाली गत संक्रमण करने के लिए भी जाना जाता है। क्षय रोग एक गतिशील स्पेकट्रम में उपस्थित होता है जो स्पर्शोन्मुख भी हो सकता है अथवा रोगसूचक भी। क्षय रोग का संचारी रोग है। संक्रमित रोगियों के कफ, खांसने, छींकने या श्वास के माध्यम से इसके जीवाणु हवा में फैल जाते हैं। हमारी शारीरिक प्रतिरक्षा प्रणाली हवा में उपस्थित इन जीवाणुओं से हमारी रक्षा करती है और संक्रमण नहीं हो पाता है, यदि संक्रमण होता भी है तो जीवाणु निष्क्रिय रहते है एवं बीमारी का कोई भी लक्षण दिखाई नहीं देता है। जब किसी कारणवश रोग प्रति कार शक्ति कमजोर हो जाती है, जैसा कि आई.वी. संक्रमित व्यक्ति में देखा गया है, तब यह जीवाणु सक्रिय हो जाते हैं एवं संक्रमण के लक्षण पैदा हो जाता हैं।

20वीं सदी के मध्य में सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार एवं बी.सी.जी. टीके की खोज ने क्षय रोग के कारण होने वाली रूग्णदर एवं मृत्युदर में बहुत कमी आई है। यह बीमारी 1980 के दशक में समाप्त होती नजर आई, जब लक्षण रोग के नए मामले संज्ञान में आने लगे। इसके मुख्य कारण गराबी, गंदगी, कुपोषण एवं एड्स का उत्थान/एड्स जैसे कारणों से व्यक्ति की कोशिकाओं की प्रतिरक्षा क्षमता नष्ट हो जाती है, जिससे क्षय रोगकारी जीवाणुओं को संक्रमण फैलाने का उचित अवसर प्राप्त हो जाता है। आज भी विश्व की एक तिहाई जनसंख्या अप्रकट क्षय रोग से ग्रसित है, जिसमें से 5 से 10 प्रतिशत भविष्य में सक्रिय होने वाले संक्रमण के शिकार हो जाते हैं।

क्षय रोग प्रतिरोधी औषधियों के (एमडीआर–टीबी) एवं बड़े पैमाने पर क्षय रोग प्रतिरोधी (एक्सडीआर–टीबी) औषधियों के विकसित होने से प्रथम एवं द्वितीय पंक्ति की दवाईयों को

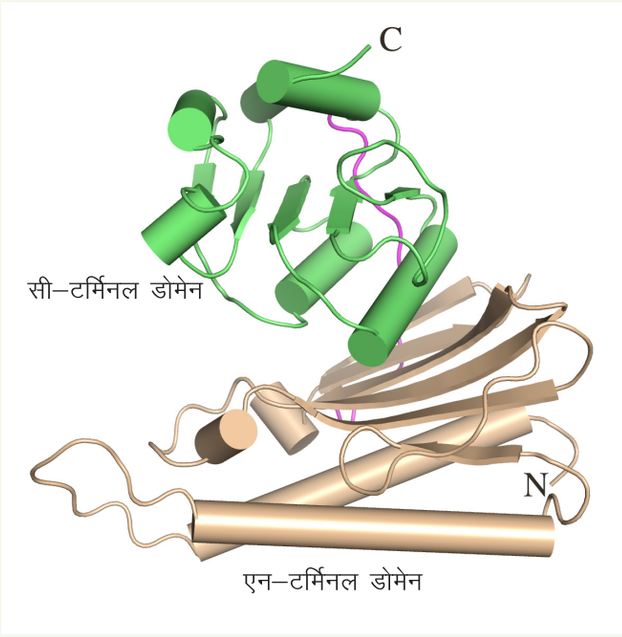

हिस्टिटडीनॉल फॉस्फेटस (एचआईएसएन) की 3डी संरचना का कार्टून

अप्रभावी कर दिया है। कुछ गत वर्षों में 'औषधि लक्ष्य' के लिए चल रहा अनुसंधान केवल कुछ विशिष्ट चयापचयी क्रियाओं जैसे कोशिका भित्ति निर्माण आदि पर केंद्रित है, जिसका लक्ष्य के तौर पर प्रमुखता से उभर कर आई हैं। जीवाणु जीवन चक्र के लिए इसकी उपयोगिता एवं अपरिहार्यता इन्हें अत्यंत प्रभावी औषधि लक्ष्य बनाती है।

हिस्टीडीन जैव संश्लेषण को संज्ञान में लेते हुए जो अनुसंधान किया गया है, उससे क्षय रोगकारक जीवाणु की उत्तरजीविता एवं रोगजनन के लिए हिस्टीडीन संश्लेषण की अपरिहार्यता प्रमाणित हुई है। यह क्रिया स्तनधारी जीवों में नहीं पाई जाती है। अतः इनको क्षय रोगकारी जीवाणु विरोधी औषधि लक्ष्य करना अत्यंत ही आकर्षक विचार है। इस क्रिया में उपयोग होने वाले किण्वकों के उत्परिवर्ती, इन्हीं किण्वकों के विपोषी होते हैं। ये उत्परिवर्ती विकास, प्रजनन एवं रोगजनन में अवरूद्ध होते है। इन किण्वकों की कार्य अक्षमत, जीवाणु के जीवनचक्र के लिए प्राण घातक है। अणुओं की त्रिविम दृश्यम संरचना का अध्ययन औषधि अनुसंधान के लिए अत्यंत ही शक्तिशाली माध्यम है। गौरतलब है कि 90 प्रतिशत से अधिक खोजी गई औषधियों की त्रिविम दृश्यन संरचना पी.डी.बी. में प्रस्तुत प्रोटीन संरचनाओं के समान ही है। संरचनात्मक अध्ययन पर आधारित वायल अवरोधक औषधियां एच.आई.वी. जैसे अवरोधक, इन रोग जनकों के विनाश के लिए नए और उचित अवसर प्रदान करती हैं। विश्व को क्षय रोग मुक्त होने की दिशा में अग्रसर करने के लिए हमारी प्रयोगशाला–संरचनात्मक एवं क्रियात्मक जीवविज्ञान प्रयोगशाला (राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान) हिस्टीडीन जैव संश्लेषण के किण्वकों के त्रिविम दृश्यन संरचना एवं अवरोधकों के निर्माण की दिशा में निरंतर कार्यरत है।

भारत के सात महान वैज्ञानिक जो है पूरी दुनिया में मशहूर !

हमारे देश में समय–समय पर ऐसे महान लोगो ने जन्म लिया है जिन्होंने हमारे देश का नाम पूरे विश्व में ऊँचा किया है इन महान लोगो ने न सिर्फ भारत को बल्कि पूरे विश्व को अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है, ऐसे ही महान लोगो में शुमार है हमारे देश के 7 प्रसिद्ध महान वैज्ञानिक, जिन्होंने विज्ञान के क्षेत्र में इस दुनिया को नयी खोज दी। इस लेख में हम आपके साथ उन सात महान वैज्ञानिकों के बारे में जानकारी दे रहे है, जो अपनी प्रतिभा के कारण पूरे विश्व में मशहूर है :–

1. डॉ. चंद्रशेखर वेंकट रमन (C.V. Raman)

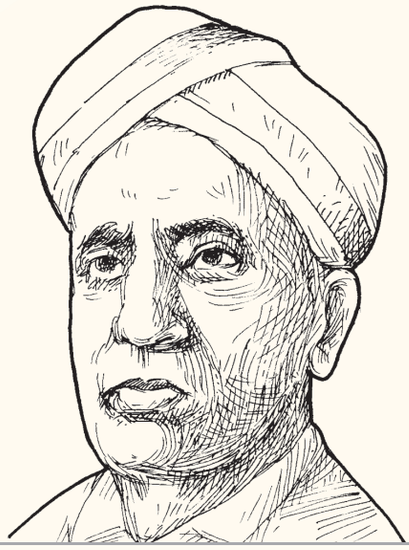

भौतिकी में नोबेल पुरस्कार (Nobel Prize) पाने वाले सर चंद्रशेखर वेंकट रमन का जन्म तमिलनाडु के तिरूचिरापल्ली शहर में 7 नवम्बर सन् 1888 को हुआ था, इनके पिता का नाम चंद्रषेखर अप्यर व माता का नाम पार्वती अम्मा था। रमन के पिता भौतिक विज्ञान व गणित के अध्यापक थे जिस कारण उनकी कई किताबें रमन ने पढ़ना शुरू कर दिया।

जिसका फल उन्हें आगे जाकर मिला और इन्होंने स्पेक्ट्रम (Spectum) से संबंधित रमन प्रभाव (Raman effect) का आविष्कार किया। इसी के चलते उन्हें सन् 1930 में भौतिकी का नोबेल पुरस्कार मिला। भारत सरकार ने विज्ञान के क्षेत्र में बहुमूल्य योगदान के लिए देश का सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' दिया। साथ ही संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी उन्हें प्रतिष्ठित 'लेनिनशांति पुरस्कार से सम्मानित किया। सर रमन ने प्रमुख रूप से प्रकाश के प्रकीर्णन, रमण प्रभाव, तबले और मृदंगम के संनादी (हार्मोनिक) की प्रकृति की खोज की। बेंगलुरू में सर सी.वी रमन ने रमन रिसर्च इंटीटयूट की स्थापना की।

2. डॉ. हरगोविंद खुराना (Dr. Hargovind Khurana)

चिकित्सा में नोबेल पुरस्कार विजेता **डॉ. हरगोविंद खुराना** को जीन की संश्लेषण (Gen Synthesis) के लिए पूरे विश्व में जाना जाता है। इनका जन्म 9 जनवरी 1922, रायपुर, मुल्तान (अब पाकिस्तान) में हुआ था।

डॉ. हरगोविंद खुराना का जन्म एक गरीब परिवार में हुआ था, पर हरगोविंद खुराना ने हमेशा ही अपनी पढ़ाई पर ध्यान दिया। जेनेटिक कोड को समझने और प्रोटीन संश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिका के लिए सन् 1968 में डॉ खुराना को चिकित्सा विज्ञान का नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। यह पुरस्कार डॉ. खुराना को दो अमेरिकी वैज्ञानिकों डॉ. राबर्ट होले और डॉ. मार्शल निरेनबर्ग के साथ साझा दिया गया। उन्होंने बताया था कि डी. एन. ए. प्रोटीन्स का संश्लेषण किस प्रकार से करता है। अमेरिका ने उन्हें 'नेशनल एकेडमी ऑफ़ साइंस की सदस्यता भी प्रदान की है। इनका निधन 9 नवम्बर 2011 को हुआ।

3. डॉ. सुब्रमण्यम चंद्रशेखर (Subrahmanyan Chandrasekhar)

सन् 1983 में भौतिकी में नोबल पुरस्कार से सम्मानित बीसवीं सदी के महानतम वैज्ञानिकों में शुमार सुब्रमण्यम चंदशेखर का जन्म 10 अक्टूबर सन 1910 को लाहौर में हुआ था। सुब्रमण्यम चंदशेखर को तारों पर की गयी अपनी खोज के लिये भी जाना जाता है। इन्होंने खगोलशास्त्र, भौतिकी और गणित के क्षेत्र में बहुत ही बेहतरीन कार्य किये, सुब्रमण्यम चंदशेखर भारत के महान वैज्ञानिक व नोबल पुरस्कार विजेता सी.वी. रमन के भतीजे थे। इन्होने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा अपने माता–पिता से ही ली तथा बारह वर्ष में हिन्दू हाई स्कूल में एडमिशन लिया। इन्होने भौतिकी में स्नातक की डिग्री सन 1930 में पूरी की और आगे की पढ़ाई के लिए इंग्लैंड चले गये। चन्द्रशेखर ''चंद्रशेखर लिमिट'' की खोज के लिए हमेशा ही याद रखा जाए इनकी मृत्यु 21 अगस्त सन 1995 को हुई।

4. डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम (APJ Abdul Kalam)

मिसाइल मैन (**Missile Man**) के नाम से प्रसिद्ध और भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी. जे. अब्दुल कलाम का जन्म 15 अक्टूबर सन 1931 को रामेश्वरम, तमिलनाडू में हुआ था। सन् 1962 में डॉ. कलाम 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन' में शामिल हुए। डॉ. कलाम को प्रोजेक्ट डायरेक्टर के रूप में भारत का पहला स्वदेशी उपग्रह (एस.एल.वी. तृतीय) प्रक्षेपास्त्र बनाने का श्रेय दिया जाता है। इनके प्रयासों के कारण ही भारत अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष क्लब का सदस्य बन पाया। सन् 1998 के पोखरण द्वितीय परमाणु परिक्षण में इनकी प्रमुख भूमिका थी। डॉ. कलाम ने स्वदेशी लक्ष्य भेदी (गाइडेड मिसाइल्स) को डिजाइन किया था व अग्नि एवं पृथ्वी जैसी मिसाइल्स को सिर्फ स्वदेशी तकनीक से बनाया। डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम को समाज व देश के लिए किये गये अपने सराहनीय कार्यों के लिए कई पुरस्कार मिले जिसमें भारत सरकार द्वारा दिए गये सबसे बड़े नागरिक सम्मान भारत रत्न, पद्म भूषण व पद्म विभूषण शामिल है। इनका निधन 27 जुलाई सन, 2015 को शिलोंग, मेघालय में हुआ।

5. डॉ. जगदीश चंद्र बसु (Jagdish Chandra Basu)

डॉ. जगदीश चंद्र बोस का जन्म 30 नवंबर सन 1858 को बंगाल में हुआ था, सर जगदीश चंद्र बोस को भारत के प्रमुख वैज्ञानिको में गिना जाता है। इन्हें भौतिकी, जीवविज्ञान, वनस्पतिविज्ञान तथा पुरातत्व का बहुत ज्यादा ज्ञान था। बोस पहले ऐसे वैज्ञानिक थे जिन्होंने रेडियो और सूक्ष्म तरंगों की प्रकाशिकी पर कार्य किया और वनस्पति विज्ञान में कई महत्तवपूर्ण खोजें की। इन्होंने अपनी स्नातक की शिक्षा सेन्ट जैवियर महाविद्यालय, कलकत्ता से की। चिकित्सा की शिक्षा लेने के लिए बोस लन्दन विश्वविद्यालय गये, लेकिन वहां स्वास्थ्य बिगड़ जाने के कारण वे भारत लौट आये।

भारत आने के बाद, उन्होंने प्रेसिडेंसी महाविद्यालय में भौतिकी के प्राध्यापक का पद संभाला और साथ में वैज्ञानिक प्रयोग करते रहे। इन्होंने इसके बाद एक

यन्त्र क्रेस्कोग्राफ का अविष्कार किया जिससे विभिन्न उत्तेजकों के प्रति पौधों की प्रतिक्रिया का अध्ययन किया। इन्होंने यह खोजा कि वनस्पतियों और पशुओं के ऊतकों में काफी समान्ता होती है। वह बोस ही थे जिन्होंने पहली बार इस दुनिया को बताया कि पौधो में भी जीवन होता है डॉ. जगदीश चंद्र बोस को रेडियो विज्ञान व बंगाली विज्ञान कथा–साहित्य का पिता माना जाता है। इनकी मृत्यु 23 नवम्बर सन 1937 को हुई।

6. डॉ. होमा जहाँगीर भाभा (Homa Jahangir Bhabha)

होमा जहांगीर भाभा भारत के महान परमाणु वैज्ञानिक थे, जिन्हें भारत के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम का जनक कहा जाता है। वे भाभा ही थे जिनके प्रयासों के कारण ही भारत आज विश्व के प्रमुख परमाणु संपन्न देशों में शामिल है। होमी जहांगीर भाभा का जन्म 30 अक्टूबर सन 1909 को मुम्बई के एक सभ्रांत पारसी परिवार में हुआ था। होमी जहांगीर भाभा ने कॉस्केट थ्योरी ऑफ इलेक्ट्रान का प्रतिपादन किया व इसके साथ ही कॉस्मिक किरणों पर भी काम किया जो पृथ्वी की ओर आते हुए वायुमंडल में प्रवेश करती हैं। उन्होंने 'टाटा इंस्ट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्ज; (टीआइएफआर) और भाभा एटॉमिक रिसर्च सेन्टर की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वह भाभा ही थे जिन्होंने मुम्बई में भाभा परमाणु शोध संस्थान (Bhabha Atomic Research Institute) की स्थापना की थी। भाभा की एक विमान दुर्घटना में 24 जनवरी, 1966 को मृत्यु हो गई।

7. डॉ. बीरबल साहनी (Birbal Sahni)

भारत के बेस्ट पोलियो–जियोबॉटनिस्ट **(Paleo-Jiobotnist)** डॉ. बीरबल साहनी का जन्म 14 नवम्बर 1891 में शाहपुर जिले (अब पाकिस्तान में) के भेड़ा नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम प्रो. रूची राम साहनी था। इनके पिता एक शिक्षा शास्त्री, विद्वान और समाज सेवी थे, जिन्होंने बचपन से ही बीरबल के अंदर विज्ञान को बढ़ावा दिया। डॉ. बीरबल साहनी एक भारतीय पुरावनस्पती वैज्ञानिक बने, जिन्होंने भारतीय उपमहाद्वीप के जीव अवशेषों का अध्ययन किया और इस क्षेत्र में बहुत सफलता पाई। डॉ. बीरबल ने लखनऊ में 'बीरबल साहनी इंस्टिट्यूट ऑफ पैलियोबॉटनी' की स्थापना की। पुरावनस्पति के क्षेत्र में इनका योगदान बहुमूल्य है। बीरबल साहनी की ख्याति पूरे विश्व में है।

राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान के प्रशासनिक स्टॉफ के साथ संस्थान के निदेशक डॉ. अमूल्य कुमार पंडा

मि. जो जॉनसन, विश्वविद्यालय, विज्ञान, अनुसंधान एवं नवाचार राज्य मंत्री ब्रिटेन, का पुष्प गुच्छों से स्वागत करते रा.प्र.सं. के निदेशक डॉ. अमूल्य कुमार पंडा

सम्पादकीय कार्यालय
राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान, अरूणा आसफ
अली मार्ग, नई दिल्ली–110067
दूरभाषः 011–26162125